मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाओी देसाओी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद — १४

सर्वाधिकार नवजीवन प्रकाशन संस्थाके अधीन

पहली वार : ५०००, १९४१
दूसरी वार : ५०००, १९४८
तीसरी वार : १००००, १९५१
चौथी वार : ७०००, १९५१
पाँचवीं वार : १००००, १९५२
छठी वार : १३०००

प्रस्तावना

पूज्य गांधीजीकी साठवीं जयन्तीकी यादमें ये रेखाचित्र पहली बार लिखे गये थे। तबसे बरसों बीत चुके हैं, और अीश्वरकी करुणासे गांधीजीका जीवन बालकसे भी अधिक जोशके साथ बढ़ता रहा है।

स्वभावतः अिस अवसर पर कुछ नये रेखाचित्र अिसमें शामिल किये गये हैं। पुराने चित्रोंकी वस्तु और क्रममें भी कुछ परिवर्तन किये गये हैं।

गुजरातके बालक अिसे अुमंगके साथ पढ़ें और बापूजीकी आत्माको सुख पहुँचानेवाले बनें!

वेड़छी आश्रम,
अुद्योगशाला
१३-५-१९३९

जुगतराम दवे

बालमित्रोंसे

पिछले बारह बरससे गुजरातके बालक अिस पुस्तकको बड़े चावके साथ पढ़ते आ रहे हैं। बारह बरस पहले श्री जुगतरामभाअीने अिसे गुजरातके हमारे बालमित्रोंके लिअे लिखा था। अुन्हीं दिनोंमें मैंने अिसका अेक अनुवाद किया था, जो बादमें कहीं लापता हो गया। बारह साल बाद अबकी मुझे मौका मिला और मैंने अिसका दुबारा अनुवाद किया।

पुस्तक आपके हाथमें है। आप अिसे पढ़िये। अुत्साह और अुमंगके साथ पढ़िये। बार-बार पढ़िये और पढ़कर गांधीजीके जीवनको समझनेकी कोशिश कीजिये।

अीश्वर करे, पूज्य गांधीजीके जीवनकी ये झाँकियाँ हममें से हरअेकको अूंचा अुठाने और आगे बढ़ानेवाली हों!

गांधी-सप्ताह
२–१०–'४१

काशिनाथ त्रिवेदी

अनुक्रमणिका

गांधीजी

१

कहाँके हैं?

अगर कोअी पूछे — 'गांधीजी कहाँके हैं?'

तो पोरबन्दर सबसे पहले कह अुठेगा — 'मेरे यहाँके हैं। यहीं अुनका जनम हुआ है।'

सागरके अुस पारसे फिनिक्स और टॉल्स्टॉय आश्रम पुकार अुठेंगे — 'भाअी! अुनका सच्चा जनम तो हमारे यहाँ हुआ। क्या अितने ही में भूल गये?'

अहमदाबाद कहेगा — 'लेकिन आश्रम तो अुन्होंने मेरी साबरमतीके किनारे बसाया था न?'

पूना अपना हक जताते हुअे कहेगा — 'यरवदाका जेल तो मेरा है न? बापूका 'यरवदा मन्दिर', अुनका वह 'जेल-महल' क्या अिस तरह भूल जानेकी चीज है?'

बिहारका किसान क्यों पीछे रहने लगा? वह कहेगा — 'आपकी जो मरजी हो, कह लें; मगर गांधीजी हैं तो हमारे! आपको क्या पता कि हमारे नीलके खेतोंमें अुन्होंने कितने-कितने चक्कर काटे हैं?'

क्या पंजाब चुपचाप अिन दावोंको सह सकता है? नहीं, वह अपनी बुलंद आवाजसे पूछेगा — 'क्या आप अिस हकीकतसे अिनकार करना चाहते हैं कि गांधीजीको जगानेवाला, होशमें लानेवाला, मेरा जलियाँवाला बाग ही है?'

कलकत्ता कहेगा — 'लेकिन भाअी, असहयोगका बिगुल तो मेरे आँगनमें बजा था न?'

बम्बअी पूछेगी —'पर मेहरबान, सत्याग्रहका आरम्भ करने तो वे मेरे ही घर आये थे न?'

बारडोलीका दावा भी सुनने लायक होगा। वह कहेगी —'नक्कारखानेमें तूतीकी आवाज भला कौन सुनेगा? पर सच तो यह है, कि गांधीजीने लड़ाअीके लिअे मैदान मेरा ही चुना था।'

अिसी तरह दिल्ली भी गांधीजीको अपना समझती है; क्योंकि गांधीजीने अपने अुपवासके पवित्र अिक्कीस दिन वहीं बिताये थे। वेलगाँवको अपना दावा किसीसे कम नहीं मालूम होता। हिन्दुस्तानके राष्ट्रपतिका ताज बेलगाँवकी महासभाने ही गांधीजीको पहनाया था न? और राजकोट, जहाँ अुन्होंने अपने प्राणोंकी बाजी लगाअी थी, वह भी तो अुन्हें अपना ही समझता है।

अिन सारी बातोंको सुनकर पहाड़ोंका राजा हिमालय होठोंमें मुसकराता है। वह कहता है—'कौन अिन लोगोंके मुँह लगे? अिन बेचारोंको क्या पता कि गांधीजी मन-ही-मन किसके लिअे तड़पा करते हैं?'

पर धन्य है, अुस छोटे-से सेवाग्रामको! बीच हिन्दुस्तानमें बसे हुअे अिस नन्हें-से गाँवका कोअी नाम तक नहीं जानता था। औरोंकी तरह न वह अपना दावा लेकर आगे बढ़ा, न झगड़ा, न फरियाद की। फिर भी बड़ा भागवान है वह, कि गांधीजी आज अुसीको अपनाये हुअे हैं। अिसीलिअे न साबरमतीका सन्त अब सेवाग्रामका सन्त कहलाता है?

२

जाति

वैसे गांधीजी मोढ़ वनियोंकी जातिमें पैदा हुअे हैं। पर वे खुद अपनेको क्या कहते हैं?

अेक वार सरकारने अुन पर राजद्रोहका मामला चलाया। अहमदावादकी अदालतमें मुकदमेकी सुनवाअी हो रही थी। अदालतमें न्यायाधीश (मजिस्ट्रेट) अपराधीका नाम-पता पूछता ही है। गांधीजीसे भी पूछा गया:

'आपका नाम क्या है?'

'मोहनदास करमचंद गांधी।'

'आप रहते कहाँ हैं?'

'सत्याग्रह आश्रम, सावरमती।'

'आपका पेशा क्या है?'

'किसानी और जुलाहागिरी।'

यह आखिरी जवाब सुनकर न्यायाधीश सन्न रह गये! जनता दंग रह गअी!

पुतलीबाओी

गांधीजीकी माँका नाम पुतलीबाओी था। वे बड़ी भावुक थीं। बिना पूजापाठ किये कभी खाना न खाती थीं और रोज देवदर्शनके लिअे मन्दिरमें जाती थीं।

महीनेमें दो बार बिला नागा अेकादशीका व्रत रखती थीं, और दिनमें अेक बार खाकर रह जाना तो अुनके लिअे बायें हाथका खेल था।

बारिशके चार महीनोंमें, चातुर्मासमें, वे तरह-तरहके व्रत-अुपवास किया करती थीं — कभी चान्द्रायण, कभी अेकाशन, कभी कुछ, कभी कुछ।

किसी साल चौमासेमें वे कुछ कड़े व्रत भी किया करती थीं। अेक व्रत सूरजवंशीका था, यानी जिस दिन सूरज दिखाओी दे जाय, अुसी दिन खाना, वरना अुपासे रह जाना।

अैसी भोली और भावुक माँ पर बच्चोंका बेहद प्यार हो, तो अुसमें अचरज ही क्या? जिस दिन माँको भूखों रहना पड़ता, बच्चे दिन-दिन भर बादलोंकी ओर ही देखा करते, और ज्यों ही सूरज दीखता, दौड़कर माँके पास खबर देने पहुँच जाते:

'माँ! माँ! दौड़ो, दौड़ो, सूरज निकला।' लेकिन माँ पहुँचें, पहुँचें, अितनेमें तो सूरज फिर बादलोंमें छिप जाता और यों माँको कओी बार भूखों रह जाना पड़ता।

मगर माँ बातकी अैसी तो पक्की थीं, कि दुनिया चाहे अुलट जाये, खुद बीमार पड़ जायँ, अरे, जान चली जाये, तो भी व्रत तो व्रत ही रहता था!

अैसी टेकवाली, अैसी भली, अैसी भोली और भावुक माँ जिनकी थीं, अुन गांधीजीका फिर क्या पूछना था?

कस्तूरबा

शायद तुममें से कअियोंने गांधीजीको देखा होगा, पर कस्तूरबाको तो शायद बिरलों ही ने देखा हो ! वे गांधीजी जैसे महापुरुषकी पत्नी हैं । तुम सोचते होगे कि वे महारानी बनकर रहती होंगी । माताजीके नाते लोगोंसे अपनेको पुजवाती होंगी । अुनका ठाट-बाट ही कुछ निराला रहता होगा । आश्रममें रहते समय वे गांधीजीकी बराबरीसे बैठती और लोगोंको दर्शन दिया करती होंगी ! पर दरअसल अैसी कोअी बात नहीं । 'बा' का तो ढंग ही कुछ और है । वे कभी आगे आतीं ही नहीं । आश्रममें जाकर देखो, तो अुन्हें कहीं न कहीं किसी काममें मशगूल पाओ ! कभी रसोअीघरमें रोटी बेलती दिखाअी पड़ेंगी, कभी गांधीजीका खाना तैयार करती मिलेंगी, कभी किसी बीमारकी सेवामें, तीमारदारीमें, लगी होंगी । हाँ, जब कभी गांधीजी बीमार होते हैं, तो अुनका सिर दबानेका काम कस्तूरबा ही करती हैं, और अैसे समय वे अुनके पास जरूर दिखाअी पड़ जाती हैं ।

कस्तूरबाकी यह आदत नहीं कि वे सभाओंमें या जलसोंमें गांधीजीके साथ बराबरीसे जायँ, और मंच पर खड़ी होकर भाषण करने लगें । अुनका तो तरीका ही कुछ और है । अकसर तो वे जातीं ही नहीं, मुकाम पर ही रहती हैं; पर जब जाती हैं तो चुपचाप पीछे-पीछे जाती हैं, और सभाके किसी कोनेमें, बहनोंके बीच, चुपके-से बैठ जाती हैं । किसीको खयाल तक नहीं होता कि ये कस्तूरबा हैं, गांधीजीकी पत्नी हैं !

कस्तूरबाको बड़ी बनकर घूमनेका जरा भी शौक नहीं। बड़प्पनके दिखावेसे अुन्हें कोअी मतलब नहीं । वे तो अेक ही बात जानती हैं——गांधीजीके पीछे-पीछे चलना और अुनकी सेवा करना! सीताने रामके लिअे राजपरिवारका सुख छोड़ा, और जंगलकी राह पकड़ी थी। कस्तूरबा भी अिसी तरह शाही सुखोंका त्याग करके गांधीजीके साथ आश्रमवासिनी बनी हैं।

अिस जमानेमें तुम्हें कहीं सतीके दर्शन करने हों, तो कस्तूरबाके दर्शन कर लो ।

५

परीक्षा

गांधीजी अंग्रेजीके दूसरे या तीसरे दर्जेमें पढ़ते थे ।

अेक बार अुनके स्कूलमें कोअी अिन्स्पेक्टर अिम्तहान लेने आये और अुन्होंने गांधीजीकी कक्षाके सभी छात्रोंको अंग्रेजीके पाँच शब्द लिखाये ।

वर्ग-शिक्षक पासमें खड़े थे। वे घूर-घूरकर तिरछी निगाहसे देख रहे थे कि कौन क्या लिख रहा है। अुनकी छाती धड़क रही थी। वे डरते थे कि कहीं लड़कोंने गलत लिख दिया, तो डाँट अुन पर पड़ेगी। अिन्स्पेक्टर कहेंगे: ‘मास्टर पढ़ाना नहीं जानता ।’

मास्टरने देखा कि मोहनदासने ‘केटल’ (kettle) शब्दके हिज्जे गलत लिखे हैं। पर बेचारे क्या करते? वे घूमते घामते मोहनदासके पास गये, और अपने बूटकी ठोकरसे अुनका पैर दबाकर अिशारा करने लगे कि वह पासवाले

लड़केकी पट्टी देख लें। लेकिन मोहनदास तो अिन बातोंसे कोसों दूर रहनेवाले थे। अुन्हें खयाल तक न हुआ कि मास्टर चोरीका अिशारा कर रहे हैं। फिर वह कैसे समझ लेते कि शिक्षक दूसरेका देखकर सही लिखनेको सुझा रहे हैं?

दूसरे दिन शिक्षकने मोहनदाससे कहा—'निरे बुद्धू हो जी तुम! कितने अिशारे किये, मगर तुम्हारी समझमें कुछ खाक भी न आया।'

गांधीजीने शिक्षकसे तो कुछ नहीं कहा, मगर अपने मनमें यह जरूर समझ लिया कि शिक्षककी बात मानने लायक न थी; वह गलत थी और पापकी जड़ थी।

६
सत्य

बचपन ही से गांधीजीको सत्य या सचाअी बहुत प्यारी रही है।

अुन्होंने अपनी 'आत्मकथा' में लिखा है कि कैसे वे अपने बचपनमें कुछ दिनोंके लिअे बुरी सोहबतमें पड़ गये थे और फिर कैसे अुससे छूटे।

बचपनमें अपने साथी-संगियोंके साथ गांधीजीको भी बाज़ारका खाने और बीड़ी वगैरा पीनेका शौक लग गया था। अैसे कामोंके लिअे माँ-बापसे तो पैसे मांगे नहीं जा सकते। अिसलिअे अिन लोगोंने घरके नौकरोंकी जेबसे पैसे चुराना सीख लिया।

मोहनदासको ये काम दिलसे पसन्द नहीं थे, मगर क्या करते? दोस्तोंको खाते-पीते देखकर मन मचल पड़ता था, और दिल बेकाबू हो जाता था।

यों होते-होते खाने-पीनेका खर्च, और खर्चके साथ कर्ज बढ़ने लगा। दूकानदारोंके तकाजे शुरू हो गये। अब क्या हो? खयाल हुआ, नहीं, डर-सा लगने लगा, कि कहीं दूकानदार दस जनोंके सामने पैसे न माँग बैठें! कहीं घर जाकर पिताजीसे न कह बैठें!

नौकरोंकी जेबसे तो पैसे दो पैसे ही मिल पाते थे; और कर्ज बेहद बढ़ गया था। अब क्या हो?

दोस्तोंकी टोली परेशान हो अुठी। अिस टोलीमें मोहनदासके बड़े भाअी भी शामिल थे। अिस आफतसे बचनेकी अुन्हें अेक ही तरकीब सूझी, और वह चोरीकी तरकीब थी। अुन्होंने कहा — "मेरे हाथमें सोनेका यह कड़ा है; अिसमें से अेक तोला सोना कटवाकर कर्ज चुकाया जा सकता है, और बात भी छिपाअी जा सकती है।"

मोहनदासको यह अटपटा तो लगा; लेकिन विरोध करनेकी अुनकी हिम्मत न हुअी। अुन्होंने कड़ा कटने दिया।

अिस तरह कर्ज तो अदा हो गया, पर जिसे सचाअी प्यारी थी, वह तो मन-ही-मन बेचैन हो अुठा।

आत्मा अुसकी पुकार अुठी — 'अरेरे, मैं अिस चोरीमें क्यों शामिल हुआ? मैंने छिपकर खाया, छिपकर बीड़ी पी!' भाड़में जाय यह खाना, और धूलमें मिले यह धुआँ अुड़ाना!'

फिर खयाल आया — 'हाय-हाय! कैसी गलती हुअी! खुद ठगाया और पिताजीको भी ठगा।'

मोहनदास अुदास रहने लगे — अुन्हें न खाना अच्छा लगता था, न पीना। जो गलती हो गअी थी, अुसका खयाल दिनरात दिलको कचोटा करता था।

आखिर अुन्होंने तय कर लिया — 'पिताजीके सामने जाकर अपनी गलती कबूल करूँगा। वे नाराज होंगे, नाराजी सह लूंगा। मार खा लूंगा।'

पिताजीके सामने जाकर मुंहसे कुछ कहनेकी हिम्मत कैसे हो? मोहनदासने अेक चिट्ठी लिखी। चिट्ठीमें अपनी गलतियोंका पूरा ब्यौरा लिखा; गलतियाँ कबूल कीं और पिताजीसे माफी माँगी। आँसूभरी आँखों और काँपते हाथों चिट्ठी पिताजीको दी। पढ़ते ही अुनकी छाती भर आअी। आँखें सजल हो अुठीं। अुन्होंने कसूर माफ कर दिया, और अपने सत्यवादी बेटेको गले लगा लिया!

७

प्रह्लाद और हरिश्चन्द्र

अिन दोनों सत्याग्रहियोंकी कथा पर गांधीजी बचपन ही से मुग्ध हैं। जो खुद सचाअीसे प्यार करता है, अुसे सच बोलनेवालोंकी, सत्यवादियोंकी, कथायें क्यों न प्यारी लगेंगी?

राजा हरिश्चन्द्रने सत्यके लिअे कितनी तकलीफें अुठाअीं? राज खोया, पाट खोया, जंगलोंमें मारे-मारे फिरे, स्त्री बेची, पुत्र बेचा और फिर खुद भी चाण्डालके हाथ बिक गये। रोंगटे खड़े करनेवाली मुसीबतें सहीं, लेकिन सचाअी न छोड़ी। कहते हैं, गांधीजीने बचपनमें 'हरिश्चन्द्र' का अेक नाटक देखा

था। बस, जिस दिन वह नाटक देखा, अुस दिनसे वे हरिश्चन्द्रके ही सपने देखने लगे। हरिश्चन्द्रकी याद आते ही वे अकसर रो पड़ते थे। अुन्होंने लिखा है कि आज भी वे अुस नाटकको पढ़ें, तो अुनकी आँखें आँसुओंसे तर हुअे बिना न रहें। वे कहा करते हैं कि हरिश्चन्द्रकी तरह दुःख सहने और तिस पर भी सचाअीसे तिलमात्र न हटनेका नाम ही सत्य है।

गांधीजीको हरिश्चन्द्रसे भी बढ़कर प्रह्लादकी कथा प्यारी है। हरिश्चन्द्र तो राजा थे, अनुभवी थे और ज्ञानी थे।

लेकिन प्रह्लाद?

वह तो अेक नन्हा-सा सुकुमार बालक था। राक्षसके घर पैदा होकर भी अुसने भगवान्‌का नाम लेनेकी हिम्मत दिखाअी थी। पिताने अुसे पहाड़ पर से फिंकवाया, पर अुसने रामनाम न छोड़ा। समुद्रमें डुबोया, तो भी रामनाम न छोड़ा। जलते हुअे खम्भेसे लिपटनेको कहा गया, वह निधड़क लिपट गया, पर अुसने रामनाम न छोड़ा।

गांधीजी प्रह्लादके अिस सत्याग्रहको हमेशा अपने सामने रखते हैं। और अुठते-बैठते अिसीका अुदाहरण दिया करते हैं— 'प्रह्लादके समान कमसिन बालक भी सत्याग्रहकी ताकत दिखा सकता है। सत्याग्रहके लिअे न पहलवानोंकी-सी ताकत जरूरी है न राजाके-से सैन्यबलकी आवश्यकता है।'

८

वैष्णव

अगर कोअी गांधीजीसे पूछे : ‘आपका धर्म क्या है ?’ तो वे कहेंगे : ‘वैष्णव ।’

जो अुन्हें नहीं जानते, अुनको यह सुनकर अचरज हो सकता है । क्योंकि गांधीजी न कभी मन्दिरमें जाते हैं, न घरमें देवताकी पूजा करते हैं, न भगवान्‌को भोग लगाते हैं, और न खुद गलेमें कण्ठी या माला पहनते हैं । तिस पर जात-पाँतका कोअी खयाल नहीं रखते — हर किसीके साथ बैठकर खा लेते हैं ।

भला, अैसे आदमीको कोअी वैष्णव कह सकता है ?

मगर गांधीजीसे पूछो, तो वे कहेंगे : ‘भअी, मैं तो अपनेको वैष्णव ही मानता हूँ । नरसिंह मेहताने वैष्णवके जो लक्षण बताये हैं, अुनको मैं जानता हूँ और वैसा वैष्णव बननेकी कोशिश कर रहा हूँ । मेहताजी कहते हैं :

वैष्णव जन तो तेने कहीअे
जे पीड पराअी जाणे रे;
परदुःखे अुपकार करे तोये,
मन अभिमान न आणे रे । वैष्णव०
सकळ लोकमां सहुने वन्दे,
निन्दा न करे केनी रे;
वाच काछ मन निश्चळ राखे,
धन धन जननी तेनी रे । वैष्णव०

समदृष्टि ने तृष्णा त्यागी,
परस्त्री जेने मात रे;
जिह्वा थकी असत्य न बोले,
परधन नव झाले हाथ रे। वैष्णव०
मोह माया व्यापे नहि जेने,
दृढ़ वैराग्य जेना मनमां रे;
रामनामशुं ताळी रे लागी,
सकळ तीरथ तेना तनमां रे। वैष्णव०
वणलोभी ने कपटरहित छे,
काम क्रोध निवार्या रे;
भणे नरसैंयो, तेनुं दरशन करतां,
कुळ अेकोतेर तार्या रे। वैष्णव०

वैष्णव वह है, जो दूसरोंकी तकलीफको समझता है; दु:खमें दूसरोंकी मदद करता है; पर मनमें जरा भी गरूर नहीं आने देता।

वैष्णव वह है, जो दुनियामें सबके सामने झुकता है, किसीकी निन्दा नहीं करता, और खुद मन, वचन और शरीरसे निश्चल रहता है।

वैष्णव वह है, जो सबको बराबरीकी निगाहसे देखता है, जो तृष्णा छोड़ चुका है, जो पराअी औरतोंको माँ समझता है, जबानसे कभी झूठ नहीं बोलता, और पराये धनको कभी हाथ नहीं लगाता।

वैष्णव वह है, जिस पर मोह और मायाका कोअी असर नहीं होता, जिसके मनमें पक्का वैराग्य जमा हुआ है, और जिसे रामनामकी लौ लग चुकी है।

वैष्णव वह है, जो छल-कपटसे दूर रहता है, लालचको पास नहीं फटकने देता, और काम-क्रोध पर सवारी कसे रहता है।

नरसिंह मेहता कहते हैं कि जो अैसा वैष्णव है, अुसकी माताको सौ-सौ बार धन्यवाद है; अुसके शरीरमें सभी तीर्थ समाये हुअे हैं; और अुसका दर्शन करनेसे मनुष्यकी अिकहत्तर पीढ़ियोंका अुद्धार हो जाता है।

९

चरखा

'हे भगवन्! अगर मौत ही देनी हो, तो अैसी देना कि अेक हाथमें चरखेका हत्था हो, दूसरेमें पूनी रह गअी हो, और आँखें मुँद जायँ।'

भला भगवान्से अैसी प्रार्थना कौन करता होगा?

गांधीजी ही तो; और कौन कर सकता है?

चरखेसे अुन्हें बेहद प्यार है।

रोज चरखे पर सूत कातना अुनका अेक अटल नियम है; व्रत है। कैसा भी वक्त क्यों न हो, गांधीजी चरखा कातेंगे और जरूर कातेंगे।

सफरमें भी वे चरखेको हमेशा अपने साथ रखते हैं, और फुरसत निकालकर जरूर कात लेते हैं। बीमारी और कमजोरीमें भी वे कातना नहीं छोड़ते! अुनका व्रत ही अैसा है।

जब जेल जाते हैं, तो वहाँ भी वे अपने प्राणोंसे प्यारे चरखेको जरूर साथ ले जाते हैं।

यरवदा जेलमें गांधीजीने दो चक्कोंवाले चरखे पर खूब काता और कातते-कातते अुसमें कअी तरहके सुधार भी किये। यही सुधरा हुआ सुन्दर, नाजुक, नन्हा चरखा आज 'यरवदा चक्र' के नामसे मशहूर है।

चरखेमें वह ताकत है कि अुससे देशके करोड़ों नंगे अपना तन ढँक सकते हैं, और भूखे भरपेट भोजन पा सकते हैं। चरखेके सूतमें देशको स्वराज्य दिलानेकी शक्ति है। अिसीसे गांधीजी अुसे कामधेनु कहते हैं, और अुसकी हलकी, मीठी गूंजमें मीठे-से-मीठे संगीतका अनुभव करते हैं।

देशमें करोड़ों अैसे गरीब हैं, जो दिन-रात पसीना बहाने पर भी भरपेट खा नहीं पाते। अुनके अिस दुःखका अनुभव हमें कैसे हो सकता है? तभी न, जब हम भी अुनकी तरह कुछ मेहनत करें, कुछ पसीना बहायें। अिसीलिअे गांधीजी कहते हैं कि जिन्हें देशके गरीबोंका दुःख दूर करना है, और अुनके दुःखमें शरीक होना है, अुन्हें हर रोज कमसे कम आध घण्टा सूत जरूर कातना चाहिये।

हिन्दुस्तानके तिरंगे झण्डेके बीचोंबीच चरखा छपानेका खयाल भी गांधीजीका ही है। झण्डे पर छपा हुआ वह चरखा दुनियाके बीच यह अैलान करता है कि जो स्वराज्य करोड़ों गरीबोंका है, वही सच्चा स्वराज्य है।

१०

गांधीजीकी रहन-सहन

क्या तुम जानते हो, गांधीजीकी रहन-सहन कैसी है? जानना चाहोगे क्या कि वे किस तरह रहते हैं?

तो सुनो :

वे रोज सवेरे चार बजे नियमसे अुठते हैं। दतौन करके हाथ-मुँह धोते और फिर प्रार्थनामें शामिल होते हैं। प्रार्थनाके बाद वे कभी थोड़ा आराम करते, कभी लिखते-पढ़ते और फिर नीबूका रस और शहद मिला हुआ गरम पानी पीते हैं। अिसके बाद वे कसरतके तौर पर रोज नियमसे घूमने जाते हैं।

लौटते समय आश्रमके बीमार भाअी-बहिनोंको देखते हुअे, अुनका कुशल-मंगल पूछते हुअे, वापस अपनी जगह पर आते हैं।

फिर वे रसोअीघरमें जाकर अपने हिस्सेका काम करते हैं। अिसी समय वे थोड़ा नाश्ता भी कर लेते हैं।

अिसके बाद या तो आनेवाले मुलाकातियोंसे बातचीत करते हैं, या आये हुअे पत्रोंको पढ़ते और अुनके जवाब लिखते हैं, या 'नवजीवन' और 'यंग अिंडिया' के लिअे लेख लिखते हैं।

भोजनके समय परोसनेका काम वे बड़े चावसे करते हैं।

दोपहरको वे नियमसे चरखा चलाते हैं। दिनमें कमसे कम अेक घण्टा, और कममें कम १६० तार कातनेका अुनका नियम है।

शामको सूरज डूबनेसे पहेले ही वे भोजन कर लेते हैं, और भोजनके बाद थोड़ा घूम लेते हैं।

शामको सात बजे जब प्रार्थनाकी घण्टी बजती है, वे घूमकर वापस आ जाते हैं।

अिसके सिवा गांधीजी अपने समय-पत्रकके अनुसार कभी आश्रमकी बहनोंको, कभी विद्यार्थियोंको और कभी बाल-मन्दिरके बालकोंको कुछ पढ़ाते-लिखाते भी हैं।

अिस तरह सारा दिन काम करके रातके साढ़े नौ बजे वे सो जाते हैं। लेकिन कभी कभी काम अितना ज्यादा हो जाता है कि रातमें देर तक जागकर अुसे पूरा करना पड़ता है। यों, देरसे सोने पर भी सुबह चार बजे तो वे अुठते ही हैं। अिसमें कोअी फर्क नहीं पड़ता।

११

सत्याग्रहीकी दिनचर्या

अूपर तुम देख चुके कि अेक सत्याग्रहीकी रहन-सहन और अुसकी दिनचर्या कैसी होती है।

अुसका अेक भी मिनट निकम्मा नहीं जाता। अपना अेक क्षण भी वह आलस्यमें नहीं बिताता।

गांधीजीकी दिनचर्याकी दूसरी खूबी यह है कि वे अपने रोजके कामका समय-पत्रक हर रोज बनाते हैं, और अुसके मुताबिक अेक-अेक मिनटकी पाबन्दी रखते हैं। जिस कामके लिअे जो समय तय कर लेते हैं, अुसे ठीक अुसी समय शुरू करते हैं। और जितना समय अुसे देना होता है, अुतना ही देते हैं। अपना सारा दिन वे घड़ीके काँटे पर, घड़ीकी-सी

नियमितताके साथ विताते हैं। फिर दिनभर जितना काम वे करते हैं, अुसका रोजनामचा भी बराबर लिखते हैं, और रातमें सोनेसे पहले अुसे अेक वार देखकर और पूरा करके सोते हैं।

१२

मौन-वार

गांधीजी हर सोमवारको मौन रखते हैं, यानी अुस दिन वे किसीसे बोलते या बातचीत नहीं करते। कैसा भी जरूरी काम क्यों न आ पड़े, वे अपना मौन नहीं तोड़ते। जरूरत पड़ने पर जो कहना होता है, कागज पर लिखकर कह देते हैं, लेकिन बोलते तो हरगिज नहीं।

हफ्तेमें अेक दिन अिस तरह मौन रहनेसे अुन्हें बड़ी शान्ति मिलती है। अुस दिन न किसीसे बातचीत करनी पड़ती है, न सभाओंमें भाषण देने पड़ते हैं, और न कहीं घूमने-भटकने जाना पड़ता है। अिस तरह अुस दिन हलचल या चहल-पहलका सारा काम बन्द रहता है।

मौन-दिनकी अिस शान्तिमें अुनको काफी आराम मिल जाता है। लेकिन जानते हो, अिस आरामका अुपयोग वे किस तरह करते हैं?

आरामका यह दिन गांधीजी सोकर तो बिता नहीं सकते। हफ्तेके अखीरमें कामका जो ढेरों बोझ चढ़ जाता है, मौन-दिनकी शांतिमें अुसीको अुतारकर वे हलके हो जाते हैं।

यों मौनपूर्वक चुपचाप काम करनेमें जो आनन्द आता है, वह अनुभव करनेकी चीज है।

गांधीजीकी विशेषतायें

गांधीजीकी कुछ विशेषतायें, अुनकी कुछ खासियतें, जानने लायक हैं।

वे कभी धीमी या सुस्त चालसे नहीं चलते। अुनकी चालमें हमेशा फुर्ती रहती है।

वे कभी झुककर या सिमटकर नहीं बैठते। हमेशा तनकर और स्थिर आसनसे बैठते हैं।

वे कभी मेजका सहारा लेकर नहीं लिखते। तनकर बैठते और घुटनों पर कागज रखकर ही लिखते हैं।

वे जो कुछ लिखते हैं, अुसे दुबारा पढ़कर ही आगे जाने देते हैं। अेक छोटासा कार्ड लिखेंगे, तो अुसे भी दुबारा पढ़ेंगे, जो कुछ घटाना-बढ़ाना होगा, घटायेंगे-बढ़ायेंगे; और तभी अुसे डाकखाने जाने देंगे।

अुन्हें सफाअी और सुघड़ता बहुत प्यारी है। यही वजह है कि वे अपने कपड़े-लत्ते और दूसरी चीजोंको हमेशा बहुत ही साफ और सजावटके साथ रखते हैं।

गांधीजी हरअेक कामको बड़ी खूबी और बारीकीके साथ करते हैं।

वे कभी अपना फोटू खिचवाने नहीं बैठते।

वे काममें कितने ही क्यों न मशगूल हों, फिर भी कोअी बालगोपाल, कोअी राजा-बेटा अुनके पास जा पहुँचता है, तो वे अुससे खेले बिना रह नहीं सकते।

बातचीत करते समय गांधीजी अकसर खूब खिलखिलाकर हँसते हैं। हँसते क्या हैं, मानो फूल बिखेरते हैं।

आश्रम – १

अहमदाबाद गुजरातका राजनगर है। अिसी राजनगरके नजदीक साब्रमतीके किनारे गांधीजीका पुराना आश्रम है।

अेक जमाना था, जब अिस आश्रममें गांधीजी रहते थे, कस्तूरबा रहती थीं, और दूसरे बहुतेरे भाअी और बहन, बच्चे और बच्चियाँ भी रहती थीं।

आश्रममें गुजराती थे, महाराष्ट्री थे, पंजाबी और सिन्धी थे, मद्रासी और नेपाली भी थे। हिन्दुस्तानके सभी सूबोंके लोग वहाँ रहते थे। यूरोपके गोरे व चीन और जापानके पीले लोग भी रहते थे।

वे सभी खादी पहनते और नियमसे कातते थे।

वे सुबह चार बजे अुठकर प्रार्थनामें आते और फिर शामको सात बजेकी प्रार्थनामें भी शरीक होते। प्रार्थनामें वे श्लोक-पाठ करते, भजन गाते और रामधुनकी रट लगाते। वे गीताका पारायण करते; और अकसर प्रार्थनाके बाद गांधीजीका प्रवचन सुनते।

सभी आश्रमवासी अेक साथ, अेक जगह, बैठकर खाते। भोजनमें मिर्च, मसाला, हींग आदिका बिलकुल अुपयोग न करते। सादा और सुस्वादु भोजन आश्रमकी विशेषता रहती। सुबह-शाम नियत समय पर सब खाने बैठते और शान्तिमंत्र बोलकर खाना शुरू करते। अैसे समय कअी बार गांधीजी खुद सबको परोसकर खिलाते।

आश्रममें हरिजन भी सबके साथ ही रहते और साथ ही काम करके आश्रमके भोजनालयमें भोजन करते।

आश्रममें सफाअीका बहुत खयाल रखा जाता। जहाँ-तहाँ थूकना, कागज फेंकना, जूठन गिराना या पेशाब करना मना था।

आश्रमवासी जहाँ-तहाँ पाखाना फिरकर आसपासके जंगलको गन्दा नहीं करते। वे सुन्दर, हवादार और अुजेले कमरोंमें पाखानेका प्रबन्ध करते हैं, और पाखाना फिरनेके बाद मैलेको साफ मिट्टीसे ढँक देते हैं। आश्रमवासी अपने पाखानोंकी सफाअी खुद ही करते हैं। अिससे जो खाद मिलता है, अुसके कारण आश्रमके बगीचे खूब पनपते और लहलहाते रहते हैं!

१५

आश्रम – २

गांधीजीके साबरमतीवाले आश्रममें अेक छात्रालय था। अिस छात्रालयमें देश-विदेशके विद्यार्थी आकर रहते थे। कोअी कातना सीखता था, कोअी पींजना सीखता था और कोअी करघे पर हाथसे खादी बुनना सीखता था। कुछ विद्यार्थी कारखानेमें बढ़अीगिरीका काम सीखते और चरखे वगैरा बनाते थे।

आश्रममें कअी लड़के और कअी लड़कियाँ रहती थीं। वे सभी अुद्योग सीखते और साथ-साथ पढ़ते-लिखते भी थे।

आश्रममें बड़ी बहनोंके लिअे अेक स्त्री-निवास था। वे रोज अपने निवासमें अिकट्ठा होतीं और प्रार्थना करतीं, कुछ देर लिखतीं-पढ़तीं और कातने-पींजनेका काम भी करतीं। आश्रमका संयुक्त भोजनालय, जहाँ सभी आश्रमवासी मिलकर खाते थे, ये बहनें ही चलाती थीं। वे बारी-बारीसे रसोअी-

घरमें काम करतीं और कोठारका अनाज साफ करनेमें मदद पहुँचातीं।

आश्रममें नन्हें नन्हें बच्चोंका अेक बाल-मन्दिर भी चलता; लेकिन अुसके लिअे अलगसे कोअी शिक्षक न रखा जाता। आश्रमवासिनी बहनें ही अुस बाल-मन्दिरका काम देखतीं।

आश्रममें अेक सुन्दर गोशाला थी। गोशालामें बहुतेरी मोटी-ताजी गायें थीं। आश्रममें हमेशा गायके दूधका ही अुपयोग होता था।

आश्रमका अपना अेक छोटा-सा चर्मालय भी था। अुसमें अपनी मौत मरे मवेशियोंका चमड़ा कमाया जाता, और अुसके चप्पल वगैरा बनाये जाते। जो ढोर कत्ल किये जाते हैं, अुनके चमड़ेको काममें लाना, अुनके कत्लमें मदद पहुँचाना है। अिसलिअे आश्रमवासी अिस अहिंसक चमड़ेके जूते और चप्पल वगैरा ही काममें लाते हैं।

आश्रमकी अपनी थोड़ी खेती-वाड़ी भी है। अुसमें कुछ तो फलोंके पेड़ लगाये गये हैं, कुछ साग-सब्जी होती है, और खेतोंमें कुछ जुवार व कपास वगैरा भी बोया जाता है।

अिन सब कामोंमें आश्रमके भाअी, बहन और बच्चे सभी पूरा-पूरा भाग लेते। वे बारी-बारीसे कभी रसोअीघरमें काम करते, कभी गोशालामें गोबर अुठाने जाते, कभी पाखानोंकी सफाअी करते, और कभी खेती-वाड़ीके काममें सहायक होते।

सुबहसे शाम तक गांधीजीका आश्रम मधुमक्खीके छत्तेकी तरह अुद्योगसे गूंजा करता। गांधीजीने अिसीलिअे अुसका नाम 'अुद्योग-मन्दिर' रख दिया, जो बहुत ही ठीक हुआ।

१६
नौकर

आम तौर पर लोग आजकल पानी भरने, बरतन मलने, झाड़ने-बुहारने, पीसने, रसोअी बनाने, कपड़े धोने, कातने और पाखाना-सफ़ाअी वगैरा करनेसे जी चुराते हैं, क्योंकि अुनके खयालमें ये सारे काम हलके हैं। फुरसत रहते हुअे भी वे अिन कामोंको हाथ नहीं लगाते, क्योंकि वे मानते हैं कि ये सब हलके लोगोंके करने लायक़ काम हैं। चुनांचे वे अिनके लिअे नौकर रखते हैं, और अुन नौकरोंको हलका समझकर अुनके साथ खुद हलकेपनका सलूक करते हैं।

गांधीजी किसी कामको हलका नहीं समझते। आश्रम शुरू करनेसे पहले भी अुनके खयाल अिसी तरहके थे। यह नहीं कि अुन्होंने कभी अपने घरमें नौकर रखे ही न हों, पर नौकरोंके साथ नौकरका-सा सलूक अुन्होंने कभी नहीं किया।

बचपनमें, जब वे बहुत छोटे थे, अुनके घर रम्भा नामकी अेक नौकरानी काम करती थी। गांधीजी आज भी अुसे सगी माँकी तरह याद करते हैं। बचपनमें अिसी रम्भाने गांधीजीको सिखाया था कि जब डर लगा करे, रामका नाम ले लिया करो; डर भाग खड़ा होगा। गांधीजी असकी सीखको अभी तक भूले नहीं हैं।

बैरिस्टरी पास करनेके बाद गांधीजी कुछ दिन बम्बअीमें अपने कुनबेके साथ रहे थे। अुस वक्त अुन्होंने अपने यहाँ अेक ब्राह्मण रसोअियेको नौकर रखा था। खुद विलायतसे

लौटकर आये थे। बड़ी शानसे अंग्रेजी ठाट-बाटमें रहते थे। मगर नौकरको नौकर नहीं समझते थे। आधी रसोअी महाराज बनाता, आधी खुद बनाते, साथमें रसोअियेको कुछ सिखाते भी जाते और अुसके संग बराबरीसे बैठकर खाना खाते। नौकरके नाते अुससे किसी तरहका भेदभाव न रखते।

दक्षिण अफ्रीकामें गांधीजी काफी कमाते थे। वहाँ अुनका परिवार भी बहुत बड़ा था। फिर भी कपड़े धोने और पाखाना साफ करनेका काम गांधीजी और कस्तूरबा अपने हाथों करते थे। घरमें महरों और मुहर्रिरोंकी कमी न थी; लेकिन वे सब घरके आदमी ही समझे जाते थे और अुनके साथ वैसा ही सलूक भी होता था।

आश्रमवासी बननेके बाद तो नौकर न रखने और सारा काम खुद करनेका नियम ही बन गया। जिनका सारा जीवन ही सेवाके लिअे है, अुनके लिअे नौकर क्या और मालिक क्या?

अिस पार गंगा : अुस पार जमुना

गोकुलके बारेमें कहा जाता है कि अुसके अिस पार गंगा और अुस पार जमुना है, और दोनोंके बीचमें गोकुलकी अपनी सुन्दर बस्ती है।

गांधीजीके आश्रमका भी यही हाल है। अेक तरफ साबरमतीका जेलखाना है, और दूसरी तरफ दूधेश्वरका मन्दिर और मसान है।

गांधीजीने आश्रमके लिअे जो जगह चुनी, वह सत्याग्रहियोंकी शानको बढ़ानेवाली थी। अुन्हें न तो जेलका डर रहता है, न मौतका खौफ! दोनों चीजें अुन्हें अेकसी प्यारी हैं, और दोनों अुनकी पड़ोसिन हैं।

जेलकी तरफ अिशारा करके गांधीजी आश्रमवालोंसे अकसर कहते : 'किसी दिन हमें भी वहाँ रहने जाना है। अिसलिअे जैसी कड़ी जिन्दगी जेलमें कैदियोंको बितानी पड़ती है, वैसी यहाँ बिताना सीख लो।'

दूधेश्वरको दिखाकर वे कहते : 'जहाँ हम रोज हवाखोरीको जाते हैं, वहाँ अेक दिन हमेशाके लिअे जानेमें डर कैसा? हमारा फर्ज है कि हम देशके लिअे मरनेको हमेशा तैयार रहें।'

भला, अैसी जगहमें रहनेकी हिम्मत कौन कर सकता है? वही न, जिसे देशसेवाका सबक सीखना हो, गांधीजीकी सोहबतमें रहना पसन्द हो और मेहनत-मशक्कतकी सीधी-सच्ची जिन्दगी बितानेकी लौ लगी हो।

१८

जिन्दा लाठियाँ

जब गांधीजी हवाखोरीको निकलते हैं, तो छोटे-बड़े कअी बच्चे भी अुनके साथ हो लेते हैं, और गांधीजीके साथ गपशप लड़ानेका मजा लूटते हैं ।

मगर गांधीजीके साथ घूमने जानेवालोंको दरअसल जो मजा मिलता है, वह तो कुछ और ही है। चलते समय गांधीजीको लाठीका सहारा तो चाहिये न ? बस, ये बच्चे अुनके अगल-बगल खड़े हो जाते हैं, और गांधीजीके दोनों हाथोंको अपने कंधों पर ले लेते हैं ।

यों दोनों तरफ दो जिन्दा लाठियाँ चलने लगती हैं, और बीचमें गांधीजी बातचीत करते हुअे हवा खाते चलते हैं ।

गांधीजी अिन बच्चोंको अपनी जिन्दा लाठियाँ कहते हैं, और आश्रमके जिन बच्चोंको यों अरसे तक बापूकी लाठी बननेका मौका नहीं मिलता, वे मन-ही-मन मुरझाये रहते हैं।

लेकिन यह न समझना कि बापूकी लाठी बनना कोअी आसान काम है।

लोग शायद सोचते होंगे : 'गांधीजी बूढ़े हैं; धीमे-धीमे, डगमगाते हुअे चलते होंगे ।' लेकिन बात अैसी नहीं है । बापूको हमेशा 'डबल मार्च' की चालसे चलनेकी आदत है । अैसे समय अगर अुनकी जिन्दा लाठियाँ नन्हीं हुअीं, तो बेचारियोंको बरबस अुनके साथ दौड़ना ही पड़ता है ।

अिस तरह हवाखोरीकी मस्तीमें और वातोंके सपाटोंमें अकसर वच्चोंको—वाल-लाठियोंको—प्रार्थनाके वक्तका ख़याल भूल जाता है। लेकिन गांधीजी भला अुसे क्योंकर भूलने लगे? वे जव देखते हैं कि समय होने आया, तो झट दौड़ना शुरू कर देते हैं। फिर तो अुनके साथ अुनकी लाठियोंको भी दौड़ना पड़ता है।

१९
पोशाकका अितिहास

अेक जमाना था, जव गांधीजी कोट, पतलून और टोप पहनते थे। फिर अुन्होंने कुर्ता और लुंगी पहनना शुरू किया। अिसके वाद वे धोती, अँगरखा और साफा पहनने लगे। फिर खादीका पंचा, खादीका कुर्ता और खादीकी टोपी अुनकी पोशाक वनी। वताओ, आजकल वे क्या पहनते हैं?

खादीकी अेक लँगोटी!

गांधीजीने समय-समय पर अपनी पोशाकमें जितने फेर-वदल किये, अुनका अितिहास वड़ा दिलचस्प और जानने लायक है।

अपनी जवानीके दिनोंमें वे दक्षिण अफ्रीका रहने गये थे। वहाँ वे वैरिस्टरी करते और दूसरे सभी वकील-वैरिस्टरोंकी तरह परदेशी ढंगकी पोशाक पहनते थे।

दक्षिण अफ्रीका जानेके वाद गांधीजीने देखा कि वहाँ हिन्दुस्तानियोंका वेहद अपमान किया जाता है। अिस पर अुन्होंने वहाँके हिन्दुस्तानियोंको सिखाने, पढ़ाने, संगठित करने और सत्याग्रहकी खूवियाँ समझानेका काम शुरू किया। अुनकी

सत्याग्रही सेनाके सैनिकोंमें ज्यादातर हिन्दुस्तानके गरीब मजदूर ही थे। फिर यह कैसे हो सकता था कि अिन मजदूर सैनिकोंका सत्याग्रही सरदार अिनसे ज्यादा अच्छी पोशाक पहनता, या ज्यादा अच्छा खाना-खाता? गांधीजी-जैसा सरदार अिस भेदभावको क्योंकर बरदाश्त करता? बस, अुन्होंने अुन्हीं दिनों निश्चय कर डाला कि अुनके मजदूर भाअी जैसे कपड़े पहनते हैं, वैसे ही वे भी पहनेंगे।

अिन सत्याग्रही मजदूरोंमें ज्यादातर मजदूर मद्रासके थे, जो सिर्फ कुर्ता और लुंगी ही पहनते थे। चूंकि गांधीजी अिन्हीं सत्याग्रहियोंके सरदार थे, अिसलिअे वे खुद भी लुंगी और कुर्ता पहनने लगे, और विदेशी कोट-पतलूनको धता बता दी।

जब दक्षिण अफ्रीकाके हिन्दुस्तानियोंकी जीत हो गअी, तो गांधीजीने सोचा: 'अब मुझे अपने देश जाकर भारत-माताकी सेवा करनी चाहिये।'

अिसके साथ सवाल यह पैदा हुआ कि हिन्दुस्तानमें पोशाक कैसी पहनी जाय? गांधीजी स्वभाव ही से सत्याग्रही हैं; अिसलिअे अैसी छोटी-छोटी बातोंमें भी वे सत्यकी छान-बीन करके ही कदम बढ़ाते हैं। फिर यह कैसे हो सकता था कि वे किसी जैसी-तैसी पोशाकको पहनकर अपने देशमें वापस आते? अिस बार घरमें विलायती कोट-पतलून पहनकर आना अुन्हें रुचा ही नहीं। लुंगी परदेशमें लुंगीवालोंके साथ जँचती थी, अपने देशमें वह क्योंकर जँचती?

आखिर सोचते-विचारते अुन्होंने तय किया कि अपनी जन्मभूमि काठियावाड़की पोशाक पहनकर ही वे हिन्दुस्तानकी भूमि पर पैर रखेंगे।

अिस तरह जब गांधीजी अफ्रीकासे हिन्दुस्तान लौटे, तो धोती, कुर्ते और अँगरखेके साथ माथे पर काठियावाड़ी फेंटा बांधते और कन्धे पर दुपट्टा रखते थे।

२०

खादी

यह अुन दिनोंकी बात है, जब गांधीजीको न तो चरखा ही मिला था, और न अुनके साथियोंमें कोअी कातना ही जानता था। वह अेक अैसा जमाना था, जब शुद्ध खादीका नाम भी किसीको मालूम न था। ये सारी बातें तो बादमें पैदा हुअीं। अिससे पहले गांधीजी देशी मिलोंके कपड़ेका ही अुपयोग करते थे। बादमें अुनके साथियोंमें से कुछने हाथ-करघे पर कपड़ा बुनना सीखा, और तबसे गांधीजी करघेका बुना हुआ मोटा कपड़ा पहनने लगे। लेकिन करघेके लिअे भी सूत तो मिलका ही काम आता था। अुन दिनों हाथ-कता सूत देता कौन?

यों होते-होते कअी दिनों बाद बड़ी मुश्किलसे गांधीजीको श्रीमती गंगाबहन मजूमदार मिलीं, जिनकी मददसे अुन्होंने चरखा पाया।

फिर तो वे और अुनके कअी साथी-संगी चरखा चलाना सीखे और यों चरखे पर कता हुआ सूत बुना भी जाने लगा।

अब भला गांधीजी मिलके सूतका कपड़ा क्यों पहनने लगे? अुन्होंने तभीसे शुद्ध खादीके कपड़े पहनने शुरू कर दिये! वे खादीके कपड़े पहनने तो लगे, पर पहनते पूरी पोशाक थे। खादीकी लम्बी धोती, खादीका कुर्ता, कुर्ते पर लम्बी बाँहोंवाला अँगरखा, सिर पर खादीका लम्बा फेंटा और कन्धे पर खादीका दुपट्टा — यही अुन दिनोंकी अुनकी पोशाक थी। अितने सारे कपड़े पहनकर घूमना-फिरना अुन्हें अच्छा तो न लगता था, फिर भी महज सभ्यताके खयालसे वे अिन कपड़ोंको लादे रहते थे।

अितनेमें अेक घटना अैसी घट गअी कि गांधीजीको अपना तरीका बदल देना पड़ा। अुन्होंने सोचा: 'अिस झूठी सभ्यताके खातिर मैं क्यों नाहक अितने कपड़े लादे फिरूँ? अिन सबकी जरूरत ही क्या है?' बस अिसी घटनाके कारण खादीकी टोपीका जन्म हुआ।

२१

खादीकी टोपी

अहमदाबादके मिल-मजदूरोंका मिल-मालिकोंसे झगड़ा हो गया। मजदूरोंने हड़ताल कर दी। अनसूयाबहन अिन हड़तालियोंकी अगुआ बनीं। जहाँ अनसूयाबहन अगुआ हों, वहाँ गांधीजी न रहें, यह कैसे हो सकता था?

करीब अेक महीने तक झगड़ा चला। गांधीजी रोज मजदूरोंसे मिलते और रोज अुन्हें अपनी बातें समझाते।

गरीब मजदूरोंकी रोजी मारी जा रही थी। अुन्हें पेटभर खानेको नहीं मिलता था। फिर भी वे अुत्साहके

साथ गांधीजीकी बातें सुनने आते थे, और अपनी हड़ताल पर चट्टानकी तरह कायम थे।

जैसे-जैसे दिन बीतते गये, गांधीजी मजदूरोंमें और मजदूर गांधीजीमें घुलते-मिलते गये। दोनोंमें जो फर्क दिखाअी पड़ता था, वह खुद गांधीजीको ही अखरने लगा। अुन्होंने सोचा: 'जब अिन मजदूरोंके पास पहननेको पूरे साबित कपड़े तक नहीं हैं, तब मुझे क्या हक है कि मैं अपने तन पर अितने सारे कपड़े लादे फिरूँ? मेरी अिस लम्बी पगड़ीकी दस टोपियाँ बन सकती हैं, और दस आदमियोंके सिर ढँक सकती हैं।' बस तभीसे गांधीजीने पगड़ी या फेंटा पहनना छोड़ दिया और टोपी पहनना शुरू कर दिया। अुन्होंने अपनी धोतीका कपड़ा भी कम कर दिया। लम्बे अँगरखेको बेकार समझ छोड़ दिया, और आधी बाँहोंवाले छोटे कुर्तेसे काम चलाने लगे। अिस तरह जब गांधीजीने पोशाकमें भी मजदूरोंका ढंग अपना लिया और खुद मज़दूर-से बन गये, तब कहीं अुनकी सत्याग्रही आत्माको तसल्ली हुअी।

२२

सफेद टोपी

जब गांधीजीने पहले-पहल सफेद टोपी पहननी शुरू की, तो लोगोंको बड़ा अचरज हुआ।

लोग कहने लगे: 'सफेद टोपी? अजी, कहीं टोपी भी सफेद हुआी है? टोपी लाल हो सकती है, हरी हो सकती है, पीली या काली हो सकती है, मगर यह सफेद टोपी कैसी? अिसे टोपी कहेगा कौन?'

जब गांधीजी सफेद टोपी पहनकर बाजारमें निकलते, तो लोग अेक-दूसरेको दिखाकर हँसते हुअे कहते: 'अजी देखो तो, गांधीजीने यह क्या पहना है?' कुछ मनचले मजाक भी अुड़ाते। कहते: 'यह टोपी है, या काशीके पण्डेका कनटोप?'

लेकिन लोगोंके अिस हँसी-मजाक पर ध्यान देनेकी फुरसत किसे थी? गांधीजीने तो कभी अिन बातोंका खयाल ही नहीं किया। वे कहते: 'लोगोंको यह टोपी अच्छी नहीं लगती, भले न लगे। यह तो मानना ही पड़ेगा कि अिससे खादीकी बचत होती है, और फिजूलखर्ची रुकती है।'

किसीने समझौता करानेकी गरजसे कहा: 'गांधीजी खादीकी टोपी पहनना पसंद करते हैं, भले करें। पर सफेद टोपीकी यह जिद क्यों? क्या वे अुसे रँगवाकर नहीं पहन सकते? सफेद टोपी तो बहुत जल्द मैली हो जाती है।'

सच पूछो तो जितना मैल सफेद पर जमता है, अुतना ही काली पर भी; लेकिन कालेमें काला अिस तरह छिप जाता है कि काली चीज मैली नहीं दिखाअी पड़ती।

अिसलिअे गांधीजीका अेक ही जवाब रहा : ‘ भअी, मैल छिपानेके लिअे रंगीन टोपी पहननेसे बेहतर तो यह है कि मैली टोपी झट-झट धो डाली जाय । हमारी यह सफेद टोपी रोज धुल सकती है, और रोज नअी रह सकती है । हम अुस पर मैल जमने ही क्यों दें ? ’

लोगोंको बात जँच गअी, और सफेद टोपी जी गअी !

२३

सफेद टोपी जिन्दाबाद !

सफेद टोपी लम्बी अुमर लेकर जनमी थी । गांधीजीके समान अटल सत्याग्रही अुसके जनक थे । फिर विरोधका पहाड़ भी टूट पड़े, तो अुसकी बलासे ! वह क्यों मरने लगी ?

मरना तो दर किनार, वह दिन दूनी, रात चौगुनी फलने-फैलने लगी !

हँसी अुड़ानेवाले रफ्ता-रफ्ता चुप हो गये । सफेद टोपी सबको जँच गअी — पसन्द आ गअी ।

गरीबोंने सस्ती समझकर अुसे अपनाया ।

सफाअी-पसन्द लोगोंने अुसकी सफाअीको पसन्द किया और पहनने लगे । रोज धोओ, रोज साफ ! कम खर्च, बाला नशीं ।

कवियों और कलाकारोंने भी अुसे अपनाया । अुसकी सुन्दरताकी जी-भर सराहना की । पुरानी टोपियोंका काला-कलूटापन अुनकी रसिक आँखोंको अखरने लगा ।

स्वयंसेवकोंकी तो वह राष्ट्रीय पोशाक ही बन गअी।

बच्चे सफेद टोपी पहनकर शानसे घूमने लगे। अुसे पहनकर वे अपनेको भारतमाताका सिपाही समझने लगे।

यों होते-होते खादीकी सफेद टोपीका नाम अुसके चलानेवालेके नाम पर मशहूर हो गया। अब वह गांधी टोपी कहलाने लगी।

२४

गांधी टोपी

सेठ — मुनीमजी, अबसे आप गांधी टोपी पहनकर न आया करिये।

मुनीम — सेठजी, आप तो अैसी बात कह रहे हैं, जो मानी नहीं जा सकती।

सेठ — सो आप जानिये। लेकिन हमारे यहाँ गांधी टोपी नहीं चलेगी।

मुनीम — देखिये, मैं खादीके कपड़े पहननेका व्रत ले चुका हूँ। क्या व्रत तोड़ दूं?

सेठ — आप खादी पहनिये। खादी पहननेसे कौन रोकता है? हम कहते यही हैं कि रंगाकर पहनिये; काली, नीली, जैसी आपको पसन्द हो।

मुनीम — मुझे सफेद पसन्द है, और मैं सफेद ही पहनूं तो आपको कोअी अेतराज क्यों होना चाहिये?

सेठ — नौकरी करनी हो तो जैसा कहते हैं, कीजिये। सफेद टोपी पहननेसे आप स्वयंसेवक दिखाअी पड़ते हैं।

अगर किसीको मालूम हो जाय कि हमारे यहाँ स्वयंसेवक नौकर है, तो हमारा बड़ा नुकसान हो सकता है।

मुनीम — साहब, यह सब मेरी समझमें नहीं आता। मैं आपकी नौकरी अीमानदारीसे करता हूँ। आपको और चाहिये क्या? मैं टोपी सफेद पहनूँ या काली, अिसमें आपका नुकसान कैसा?

सेठ — देखिये मुनीमजी, नाहक़ मेरा दिमाग न चाटिये। यह गांधी टोपी है। अगर हमारे यहाँ कोअी गांधी टोपीवाला रहा, तो बरबस लोगोंका शक़ हम पर रहेगा।

मुनीम — अजी साहब, अिसमें शककी क्या बात है? गांधीजी तो हमारे देशके सबसे पवित्र पुरुष हैं। अुनके-जैसी पाक हस्ती और है किसकी?

सेठ — सो हो सकती है; लेकिन आप तो कलसे गांधी टोपी छोड़कर ही काम पर आअिये।

मुनीम — टोपी तो मैं नहीं छोड़ सकूँगा।

सेठ — तो फिर नौकरी छोड़नी होगी।

मुनीम — जैसी आपकी मरजी।

सेठ — देखिये, फिर पछताअियेगा! अिस मनहूस टोपीके पीछे नौकरी क्यों खोते हैं?

मुनीम — आपकी अिस नेक सलाहके लिअे मैं आपका बहुत ही अहसानमन्द हूँ। लेकिन पेटके खातिर मैं अपने देशका और गांधीजीका अपमान सहना नहीं चाहता। नमस्कार!

अूपरकी बातचीत वैसे तो मनगढ़न्त है, लेकिन सरकारी दफ्तरोंमें, परदेशी व्यापारियोंकी पेढ़ियोंमें, और कुछ हिन्दुस्तान

व्यापारियोंकी पेढ़ियोंमें भी अैसी घटनायें सचमुच घट चुकी हैं।

बहादुर नौकरोंने नौकरीको ठुकरा दिया, पर गांधी टोपीको न छोड़ा।

वैसे देखा जाय तो गांधी टोपीकी कीमत सिर्फ चार आने हैं। लेकिन अब तो अुसकी कीमत अितनी बढ़ चुकी है कि वह बेशकीमती ही नहीं, बेमोल हो गअी है।

अुसकी पहली खूबी यह है कि अुसके चलानेवाले गांधीजी हैं।

दूसरी खूबी यह है कि वह पवित्र खादीकी बनती है।

तीसरी खूबी यह है कि वह हमेशा बगुलेके परकी तरह साफ़ रखी जा सकती है।

चौथी खूबी यह है कि वह खूबसूरत है।

पांचवी यह कि वह हलकी, सादी और सस्ती है।

छठी यह कि वह हमारी राष्ट्रीय पोशाकका नमूना है।

सातवीं यह कि अुसका नाम गांधीजीके नामके साथ जुड़ा हुआ है।

और बड़ीसे बड़ी खूबी यह है कि अुसके लिअे सैकड़ों देशभक्तोंने तरह-तरहकी कुर्बानियाँ की हैं।

भला, अैसी अनमोल गांधी टोपीको पहनकर किसे अभिमान न होगा?

सिर्फ कुर्ता

हमें गांधीजीका अेहसान मानना चाहिये कि अुन्होंने सिर्फ अेक कुर्ता पहनकर घूमने-फिरनेका रास्ता हमारे लिअे खोल दिया।

जानते हो, पहले क्या होता था?

बाप रे बाप! सबके नीचे बनियान, अुस पर कमीज, कमीज पर जाकट और जाकट पर कोट।

अिस सारे ठाटके साथ जब दुपहरकी गरमी पड़ती थी, तो मजा आ जाता था। सारा बदन अन्दरसे आलूकी तरह सीज जाता और पसीना बदबू मारने लगता। लेकिन कोअी माअीका लाल असा न था, जो हिम्मत करके अिन सबको ठुकरा देता और सीधी-सादी पोशाकमें घरसे बाहर निकलता।

अगर कोअी बिना कोट पहने बाजारमें चला आता, तो अुस पर अँगुलियाँ अुठतीं — अुसकी पोशाक अधूरी मानी जाती। गरमी बरदाश्त हो चाहे न हो, कोट तो पहनना ही चाहिये। बिना कोटके पूरी पोशाक कैसी?

बिना कोटके स्कूलमें जाना तक मना था। कोअी अन्दर घुसने न देता। लोग कहते: 'अधूरी पोशाक पहनकर पाठशालामें आना मना है।'

बिना कोटके कोर्टों और कचहरियोंमें कोअी खड़ा न रहने देता। लोग कहते: 'अैसे जंगली आदमियोंका यहाँ कोअी काम नहीं।'

सब परेशान थे। सब तकलीफ पाते थे। पर जंगलियोंमें शुमार होनेकी हिम्मत कौन करे?

आखिर सत्याग्रही गांधीजीने यह हिम्मत दिखाअी और सबके पहले सिर्फ कुर्ता पहनकर निकलना शुरू किया ।

लोग हँसी अुड़ाने लगे । गांधीजी कहते : 'हँसनेवाले हँसा करें । दरअसल तो अिस गरम देशमें अितने कपड़े लादकर फिरना ही जंगलीपन है । तिस पर हमारा यह देश अितना गरीब है । गरीबोंके अिस देशमें जरूरतसे ज्यादा कपड़े पहनना भी अेक पाप है ।'

फिर तो सबमें हिम्मत आ गअी । सब कोअी सिर्फ कुर्ता पहनकर निकलने लगे । बड़े भी, बूढ़े भी, और बच्चे भी । बच्चे तो खुश-खुश हो गये !

खादीका कुर्ता और खादीकी टोपी हमारी राष्ट्रीय पोशाक बन गअी ।

२६

भाषाओंका ज्ञान

वैसे गांधीजी कअी भाषायें जानते हैं। पर अुन्होंने पण्डित बननेके खयालसे कभी कोअी जबान नहीं सीखी । जो कुछ सीखा, सेवाके विचारसे सीखा ।

गुजराती तो अुनकी अपनी जबान है — मातृभाषा है ।

माता-पिताके कहनेसे अंग्रेजी अुन्होंने स्कूलमें सीखी; फिर विलायत गये, वहाँ सीखी । दक्षिण अफ्रीकामें बरसों रहे, वहाँ वह पक्की हुअी ।

अफ्रीकामें अुन्हें मुसलमान भाअियोंके बीच रहने और काम करनेका मौका मिला। अुनकी सेवा करते-करते वे अुर्दू बोलना और समझना सीख गये।

अिसी तरह अफ्रीकामें अुन्हें मद्रासी मजदूरोंके साथ कामकाज करना पड़ा। वे लोग बहुत बड़ी तादादमें सत्याग्रही बनकर गांधीजीके साथ हुअे। अुनकी सेवाके विचारसे गांधीजीने कामचलाअू तामिल भी सीखी।

हिन्दुस्तानके कोने-कोनेमें अपना सन्देश पहुँचानेके खयालसे गांधीजीने कअी बार सारे देशका दौरा किया। अिन दौरोंमें अुन्हें राष्ट्रभाषाके नाते हिन्दुस्तानीका महत्त्व पट गया। अुन्होंने देखा कि किसी भी प्रान्तमें जाकर वे हिन्दुस्तानी जबानमें अपनी बात लोगोंको समझा सकते हैं — लोग हर जगह हिन्दुस्तानी समझ लेते हैं। पहले गांधीजीका हिन्दी-हिन्दुस्तानीका ज्ञान बहुत कच्चा था, लेकिन अब अुन्होंने अुस पर काफी काबू हासिल कर लिया है।

गांधीजी अिन भाषाओंको पढ़कर नहीं सीखे। रोज-रोजके अभ्याससे, अनुभव और तजरबेसे सीख गये। अब भी जब कभी मौका मिलता है, वे अिनका अभ्यास बढ़ाने और अिन्हें सुधारनेकी कोशिश जरूर करते हैं।

जब-जब लम्बी मुद्दतोंके लिअे अुन्हें जेलमें रहना पड़ा, अुन्होंने तामिल और अुर्दू सीखनेकी खास कोशिश की।

कोअी यह नहीं कह सकता कि गांधीजी मराठी ठीक-ठीक जानते हैं; फिर भी अेक बार दक्षिण अफ्रीकामें अुन्होंने गोखलेजीका अेक भाषण मराठीमें करवाया था, और खुद दुभाषिया बनकर अुसका तरजुमा किया था। अुसके बाद तो

यरवदा जेलमें रहे और अब सेवाग्राममें रहते हैं, अिसलिअे मराठीमें भी काफी तरक्की कर चुके हैं ।

बचपनमें थोड़ी संस्कृत वे स्कूलमें सीखे थे । बादमें जेल जाने पर अुन्होंने अिस भाषाका वहाँ अच्छा अभ्यास बढ़ा लिया ।

विलायतमें रहते हुअे गांधीजीने यूरोपकी पुरानी भाषा लैटिनका और वहांकी राष्ट्रभाषा-जैसी फ्रेंच भाषाका भी कामचलाअू ज्ञान प्राप्त कर लिया था ।

अपनी मातृभाषा गुजरातीका तो गांधीजीने बहुत ही विकास किया है । अुनकी भाषा सीधी, सरल, आडम्बरहीन, तेजस्वी और भावोंसे भरी रहती है ।

२७
खुराकके प्रयोग

खाने-पीनेके मामलेमें तरह-तरहके तजरबे करनेका शौक गांधीजीको बचपन ही से है । अपनी जिन्दगीमें अुन्होंने अैसे अनगिनत प्रयोग किये हैं; अपने आप पर अुन्हें आजमा कर देखा है; और कअी दफा तो अिसीकी वजहसे अपनी जानको भी खतरेमें डाला है ।

अुनका बड़ेसे बड़ा प्रयोग दूधका है । किसी भी चौपायेका दूध पीनेमें गांधीजी अेक तरहका अधर्म और हिंसा महसूस करते हैं । वे सोचते हैं : भगवान्ने जो चीज दुधारू जानवरोंके बछड़ोंके लिअे पैदा की है, अुस पर अपना हक जमा लेना अिन्सानके लिअे बहुत बड़ा पाप है — पाप माना जाना चाहिये ।

वैसे देखा जाय तो दूधकी खुराकको भी हम अेक तरहका मांसाहार ही कह सकते हैं। जब अिस तरहके खयाल मजबूत होते गये तो गांधीजीने अपनी खुराकमें से दूधको हटा देनेका, दूध छोड़ देनेका, व्रत ले लिया।

कअी सालों तक अुन्होंने दूधको छुआ तक नहीं। अिसी अरसेमें वे अेक बार अितने सख्त बीमार हुअे कि बचनेकी कोअी अुम्मीद न रही। डॉक्टरोंने कह दिया कि अगर गांधीजी दूध लेना शुरू करें, तो मुमकिन है बच जायँ! आखिर श्रीमती कस्तूरबाके समझाने और आग्रह करने पर गांधीजीने बकरीका दूध लेना कबूल किया, और अब तक वे बराबर बकरीका ही दूध लेते हैं।

दूधके बारेमें जो तजरबा अुन्हें हुआ, अुस परसे गांधीजी अब यह मानने लगे हैं कि बिना दूधके आदमीका काम चल नहीं सकता। लेकिन साथ ही अुन्हें यह भी अुम्मीद है कि किसी दिन कोअी अैसा वैज्ञानिक अिस देशमें जनमेगा, जो वनस्पतिसे दूधके-से गुणोंवाली खुराक तैयार करके अुसे लोगोंके लिअे सुलभ बना देगा।

नमकके बारेमें भी गांधीजीका यह खयाल रहा कि अिन्सानके लिअे वह जरूरी नहीं है। और अिसीलिअे कअी साल तक अुन्होंने नमक नहीं खाया। लेकिन बादमें अुन्हें यकीन हो गया कि आदमीकी खुराकमें अिस चीजकी भी जरूरत है, अिसलिअे फिर नमक खाना शुरू कर दिया।

गांधीजीका खयाल है कि अिन्सानकी पूरी और सच्ची खुराक फल ही है। मनुष्यके शरीरकी बनावट, अुसके हाथ-

पैरोंकी गढ़न, अुसके दाँत, अुसका पेट, अिन सबकी तासीरको देखते हुअे साफ मालूम होता है कि भगवान्ने मनुष्यको फल खानेके लिअे ही पैदा किया है। हम देखते हैं कि बन्दर, जो सूरत-शकलमें आदमीसे बहुत-कुछ मिलता-जुलता है, फल खाकर ही जीता है; अिससे भी हमारी बातको बल मिलता है।

लेकिन जैसी गरीबी आज अिस देशमें है, अुसमें यहांके लोग फल कैसे खा सकते हैं? शायद अिसी खयालसे गांधीजीने मूंगफली, खजूर और केले-जैसे कुछ सस्तेसे सस्ते फल खोज निकाले, और खुद कअी सालों तक अिन्हीं फलों पर रहे।

खाना पकानेके बारेमें भी गांधीजीका खयाल है कि जिन तरीकोंसे वह आजकल पकाया जाता है, वे ठीक नहीं हैं। अुनके विचारमें दरअसल तो खानेकी चीजोंको आग पर चढ़ाकर पकानेकी कोअी जरूरत ही नहीं। जो फल सूरजकी गरमीमें डालने पर पक जाते हैं, वे पूरी खुराकका काम दे सकते हैं; अुन्हें दुबारा आग पर पकाना अुनको बेकस बनाना है।

अेक बार गांधीजीको यह खयाल सूझा कि अगर अनाजको भिगोकर अँकुवा लिया जाय और अुसको अुसी रूपमें खाया जाय, तो औरतोंको चूल्हा फूंकनेसे छुट्टी मिल सकेगी और खर्चमें भी काफी बचत हो जायगी। भिगोया हुआ अनाज खूब चबा-चबा कर खाना पड़ता है, अिसलिअे पकाये हुअेके मुकाबलेमें कम खाया जाता है।

अगर यह चीज सध जाय, तो देशके गरीबोंके लिअे अेक अच्छा वरदान बन सकती है। अुन दिनों गांधीजीकी तन्दुरुस्ती अिस लायक नहीं थी कि वे अैसा खतरनाक

तजरबा अपने अूपर करते; लेकिन अुन्होंने किया। कुछ महीनोंके अनुभवके बाद जब यह भरोसा हो गया कि अैसी खुराकको अिन्सान आम तौर पर हमेशा हजम नहीं कर सकता, तो अुन्होंने अिस चीजको भी छोड़ दिया।

लोग धानको कूट-खाँड कर चावलोंको अितना सफेद कर लेते हैं कि वे बिलकुल बेकस हो जाते हैं, और फिर बड़े चावसे अुन्हीं निकम्मे चावलोंको खाते हैं। गेहूँ वगैरा नाजके चोकरको फेंककर महीन मैदे-जैसा आटा खानेमें शान समझते हैं। सच पूछा जाय तो भूसी और चोकरमें नाजकी असली ताकत रहती है; अुसको फेंक देनेका मतलब है, रसको थूककर गुठली चबाते बैठना। जबसे गांधीजीको अिस सचाअीका पता चला, वे बराबर यह कोशिश कर रहे हैं कि लोग हाथ-कुटे चावल और चोकरवाला हाथ-पिसा मोटा आटा खायें।

अब तो गांधीजीकी तन्दुरुस्ती काँचके कंगनकी तरह कमजोर पड़ गअी है; फिर भी खुराकके मामलोंमें अुनकी दिलचस्पी कायम है, और छोटे-मोटे प्रयोग तो आज भी हर रोज चलते ही रहते हैं।

२८

कुदरती अिलाज

बीमारीका नाम सुनते ही लोग अकसर हावरे-बावरे हो जाते हैं; हकीमों या डॉक्टरोंके घर दौड़े जाते हैं। और अुन्हींको अपना तारनहार समझ लेते हैं। भगवान्‌की दी हुआी अिस देहको तन्दुरुस्त रखने या अिस अनोखे यंत्रकी बनावटको समझ लेनेका हमारा अपना भी कुछ जिम्मा है, अिस बातको हम आज भूल-से गये हैं। अिसलिअे बीमारी भोगकर अुठनेके बाद जब चंगे हो जाते हैं, तो फिर मनमाना खाने-पीने लगते हैं, और मौज-शौक या भोगविलासमें डूबकर अपनी जिम्मेदारीको भूल जाते हैं।

अिस बारेमें गांधीजीके विचार खास तौरसे समझने लायक हैं।

पहली बात तो यह है कि बीमारीमें घबराना न चाहिये। जो अिलाज हो सकता है, वह जरूर करना चाहिये; लेकिन डॉक्टरको भगवान् समझ लेनेकी भूल न करनी चाहिये।

दूसरे, जितनी बीमारियाँ हैं, वे अकसर खाने-पीनेकी गड़बड़से ही पैदा होती हैं, अिसलिअे भरसक अैसी गड़बड़ न होने देनी चाहिये।

अितने पर भी अगर बीमारी आ ही पड़े, तो अपने दिलको अिस खयालसे समझाना चाहिये कि बहुतेरी बीमारियाँ अिसलिअे भी आती हैं कि वे देहरूपी मशीनके कल-पुर्जोंको बेजा बोझसे हलका कर दें, और अुसे फिरसे अच्छी तरह काम करने लायक बना दें। अिसलिअे बीमार पड़ते ही दवाअियोंकी

बोतलों पर बोतलें खाली न करनी चाहिये, बल्कि बीमारीको अपना काम करनेका मौका देना चाहिये। अिससे कुछ ही दिनोंमें रोग अपने आप मिट जाता है, और शरीरके दोषोंको भी मिटनेका मौका मिलता है।

बीमारीमें दवाअियोंका सहारा लेनेके बदले कुदरती अिलाज करना गांधीजीको ज्यादा पसंद है। गीली मिट्टीकी पट्टी रखनेसे और पानीमें कमर तक बैठने (कटिस्नान) से बुरेसे बुरा, जहरीला बुखार और दूसरी बीमारियाँ मिट जाती हैं। गांधीजी बड़े शौकसे अिनका प्रयोग करते हैं।

अपने आप पर और अपने प्यारे-से-प्यारे स्वजनों पर भी अुन्होंने कअी बार ये प्रयोग किये हैं, और अिनमें वे कामयाब भी हुअे हैं।

सूरजकी रोशनीमें रहना और खुले आसमानके नीचे सोना भी गांधीजीके कुदरती अिलाजोंमें शुमार है।

लेकिन अुनका बड़ेसे बड़ा अिलाज अुपवास या फाकेका ही है। अुन्होंने कअी भाअियों और बहनोंको बढ़ावा दे-देकर अपनी देखरेखमें अुपवास करनेको राजी किया है, और अिस तरह अुनको तन्दुरुस्त बनाया है।

जो गांधीजीके पास रहते हैं, अुन्हें अकसर यह देखनेको मिलता है कि कअी बीमारियाँ तो सिर्फ खुराकमें थोड़ा हेरफेर करनेसे ही दूर हो जाती हैं।

यों सौमें अस्सी बीमारियाँ तो कुदरती अिलाजसे ही दूर हो जाती हैं। अिसलिअे अिन बीमारियोंसे घबराकर सीधे डॉक्टरकी शरणमें जाना मनुष्यको शोभा नहीं देता।

फिर भी गांधीजीका खयाल है कि चन्द जहरीली या खतरनाक बीमारियोंके लिअे कुछ अचूक दवायें और होशियार सर्जनोंकी मदद, अुनकी चीरफाड़, जरूरी है। खुद गांधीजीको भी अिस तरहके कअी तजरबोंमें से गुजरना पड़ा है।

मगर किसी भी हालतमें बीमारीको देखकर बेकल हो जाना तो अिन्सानकी शानके खिलाफ ही है। गांधीजीके पुत्र श्री रामदासभाअीने और श्रीमती कस्तूरबाने अपनी लम्बी और भयावनी बीमारीके दिनोंमें भी मांसका शोरबा लेनेसे अिनकार कर दिया था। डॉक्टरोंने बहुतेरा कहा, पर दोनोंने हँसते-हँसते मर जाना पसन्द किया, मगर मांस खानेसे कतअी अिनकार कर दिया। अुनकी अिस दृढ़ताको देखकर गांधीजीकी आत्मा बहुत पुलकित हुअी, और अुन्होंने अपने प्यारे बीमारोंको अुनकी बहादुरीके लिअे जी-जानसे असीसा।

बीमारीके दिनोंमें घरवाले बाहर रहकर जितनी दौड़-धूप मचाते हैं, अुसके मुकाबले मरीजकी जितनी प्यारभरी सेवा होनी चाहिये, नहीं होती। गांधीजीको बीमारोंकी सेवाका बड़ा शौक है। देशका बड़ेसे बड़ा काम भी अुनको अकसर अिसके आगे फीका जँचता है। अपनी ताकत भर वे बीमारोंकी सेवाके अवसरको हाथसे जाने नहीं देते। अिसलिअे जो भाअी-बहन बीमार पड़कर अुनकी निगरानीमें अच्छे होते हैं, वे अपनी तकदीरको सराहे बिना नहीं रहते। अुन्हें अपना वह सौभाग्य कभी नहीं भूलता।

दरिद्रनारायणके दर्शन

हिन्दुस्तानका दौरा करते-करते अेक वार गांधीजी अुड़ीसा पहुँचे ।

अुड़ीसाकी गरीवी अिस देशमें अेक कहावत वन गअी है । सारी दुनियामें सवसे गरीव देश हमारा हिन्दुस्तान है, और अुड़ीसा अिसी हिन्दुस्तानका अेक वहुत ही गरीव सूवा है । वहाँ आदमी नहीं रहते, जीवित नरकंकाल रहते हैं— हड्डियोंके जिन्दा ढाँचे ! अकाल कभी अुनका पीछा नहीं छोड़ता । लोगोंको शायद ही कभी दो जून भरपेट खानेको मिलता है । अैसी हालतमें तन ढँकनेको कपड़े कहाँसे मिलें ?

अुड़ीसाकी गरीवीकी ये वातें गांधीजीने सुनी तो वहुत थीं, मगर अुस गरीवीको अपनी आँखों पहली वार अिसी दौरेमें देखा ।

गांधीजी गरीव अुड़ीसाके गाँवोंमें घूमे । गाँव क्या थे, खँडहरोंकी नुमाअिश थी ! वीच-वीचमें टूटी-फूटी झोंपड़ियाँ भी मिलती थीं, जिनमें भूख और प्याससे वेदम मर्द, औरत और वच्चे तड़पते पाये जाते थे । औरतोंके वदन पर फटे-पुराने चिथड़े लिपटे थे । अिन चिथड़ोंकी यह विसात न थी कि अुनके तनको पूरी तरह ढँके रहें ! सिर्फ कमरका हिस्सा जैसा-तैसा ढँका मिलता था । वाकीके तनको ढँकनेका, लाजको छिपानेका, कोअी सामान न था ।

अिन दृश्योंको देखकर गांधीजी वहुत ही दुःखी हुअे ।

‘हे भगवन् ! मेरे देशकी अैसी घोर गरीवी ! क्या अिस गरीवीको मिटानेके लिअे मैं कुछ नहीं कर सकता ?’

अुस दिन मानो गांधीजीने दरिद्रनारायणके सच्चे दर्शन किये।

हिन्दुस्तानके दूसरे सब सूबोंके मुकाबले अुड़ीसाके लिअे गांधीजीके दिलमें बड़ा दर्द है। अुनकी करुणा पर अुड़ीसाका बहुत बड़ा अधिकार है!

३०
लँगोटी

चम्पारनमें किसानोंको निलहे गोरोंकी गुलामीसे छुड़ाकर गांधीजी वहीं गाँवमें रहने और गाँववालोंकी सेवा करने लगे।

अेक दिन किसी गाँवमें अुन्होंने कुछ औरतोंको बहुत ही गन्दी हालतमें देखा। गांधीजीने कस्तूरबासे कहा कि वे जायें और अुन बहनोंको रोज नहाना और धुले हुअे कपड़े पहनना सिखायें।

बा गअीं। अुन्होंने अुन बहनोंसे बातचीत की। अुन्हें समझाया: 'बहनो, आपको कपड़े रोज धोने चाहिये। धोने-धानेमें अितनी सुस्ती न करनी चाहिये।'

जो बहनें गन्दे कपड़े पहने थीं, अुन्होंने कस्तूरबाको अेक नजर देखा। फिर अुनमें से अेक बहनने कहा: 'माताजी, आप अन्दर चलिये और अिस मढ़ैयाको अेक निगाह देख लीजिये।

बा अुस बहनके साथ अंदर गअीं। झोंपड़ीवालीने कहा: 'माताजी, आप अिसे अच्छी तरह देख लीजिये। क्या अिसमें कहीं कपड़ोंसे भरी कोअी सन्दूक या आलमारी नजर आती है? कुछ है ही नहीं! बदन पर पड़ी हुअी यह साड़ी ही सब कुछ है। अब बताअिये, अिसे कब धोअूं? कब बदलूं? कैसे बदलूं? आप महात्माजीसे कहिये, वे मेरे लिअे अेकाध

साड़ी और भिजवा दें! फिर मैं रोज नहाअूँगी, रोज धुला हुआ पहनूँगी और साफ-सुथरी रहूँगी।'

गांधीजीने देशकी गरीवीको कअी बार अपनी आँखों देखा था; लेकिन जब वाके मुँहसे यह दर्दभरा किस्सा सुना, तो अुन्हें अुस गरीवीकी गहराअीका ठीक-ठीक अन्दाज हो आया।

यह गरीवी कैसे दूर हो? अुस झोंपड़ीवालीको अेक साड़ी दिला देनेसे ही सवाल हल नहीं हो जाता। अुसके जैसी तो देशमें अनगिनत हैं-- लाखों, करोड़ों!

अिन सब मुसीबतोंका अेक ही अिलाज है — स्व-राज्य: अपना राज्य। जब गांधीजी स्वराज्यके लिअे सरकारसे जूझते हैं, तो अुनके दिलमें अिन्हीं करोड़ों झोंपड़ीवाली वहनोंकी याद बनी रहती है।

अेक अरसा हुआ, गांधीजीने अैसा ही अेक जंग सरकारके साथ छेड़ा था। अुसका खूब रंग जमा। लोगोंके जोशका ठिकाना न रहा। अिसी दरमियान अेक दिन अेक खास घटना घट गअी। सरकारने गांधीजीके परम मित्र और साथी मौलाना महम्मदअलीको गिरफ्तार कर लिया।

आन-वानके अिस मौके पर गांधीजीको अुन गरीव और गन्दगीमें रहनेवाली वहनोंकी याद फिर ताजा हो गअी! अुन्होंने अुसी दम यह प्रतिज्ञा की — व्रत लिया: 'जब तक अिस देशमें स्वराज्यका सूरज नहीं अुगता, और मेरी भारत-माताकी देह पूरी तरह कपड़ोंसे नहीं ढँकती, मैं अपनी देह पर तीन-तीन कपड़े न लादूंगा। लाज ढँकनेको अेक लँगोटी-भर मेरे लिअे काफी है।'

और तबसे वे सिर्फ लँगोटी ही पहनते हैं।

३१

रेल-घर : रेल-आश्रम

वड़ोदाके गायकवाड़ोंके झण्डे पर जीन-घर, जीन-तख्त लिखा रहता है। पुराने जमानेमें मराठा सरदारोंको अिस बातका वड़ा अभिमान था कि अुनके घोड़ों पर रातदिन काठी कसी रहती है।

यही हाल गांधीजीका रहा है। अुनका घर, अुनका आश्रम, जो कुछ कहो, रेलगाड़ीके तीसरे दर्जेका डव्वा है। देशके अिस कोनेसे अुस कोने तक अपना सन्देश सुनानेके लिअे अुन्हें बरसों लगातार घूमना पड़ा है। महीनों सफरमें रहना पड़ा है, और अिस हद तक रहना पड़ा है कि वे ज्यादा रेलमें रहे या आश्रममें यह कहना मुश्किल है। अैसी हालतमें रेलगाड़ीके डव्वेको ही अुनका घर या आश्रम कहा जाय तो क्या बुराअी है?

और गांधीजी भी गाड़ीके डव्वेको अपना घर समझते हैं। अुस पर सवार होकर घर ही की तरह सारा काम करते हैं। अुसमें बैठकर वे चरखा चलाते हैं। सुबह-शामकी प्रार्थना करते हैं। पुस्तकें पढ़ते, चिट्ठी-पत्री लिखते और मिलने आनेवालोंसे मिलते-बोलते हैं। गांधीजी हमेशा तीसरे दर्जेमें सफर करते हैं। बीमारी या कमजोरीकी वजहसे जब कभी अुन्हें अूंचे दर्जेमें सफर करना पड़ता, अुनका दिल बहुत दुःखी रहा करता। मनमें रह-रहकर अेक खयाल आता, जो अुन्हें बेचैन बना जाता: 'मैं अपनेको गरीबोंका सेवक मानता हूँ। वे तीसरे दर्जेकी परेशानियां अुठाते हैं, और मैं अुनसे अलग अूंचे दर्जेके गद्दों पर आकर बैठता हूँ। क्या यह अुचित है? मुनासिब है?"

6149

हमारे देशमें तीसरे दर्जेके मुसाफिरोंको जो मुसीवतें अुठानी पड़ती हैं, वे दुनियासे छिपी नहीं हैं। लोगोंके साथ खुद भी अुन्हीं मुसीवतोंका सामना करके गांधीजी खुश होते हैं। जब वे 'महात्मा' नहीं बने थे, और अितने मशहूर भी नहीं थे, तब अैसी परेशानियाँ अुन्होंने खूब अुठाअी थीं, और बड़े शौकसे अुठाअी थीं। अकसर अुन्हें मुसाफिरोंकी भीड़के बीच खड़ा रह जाना पड़ता; घण्टों खड़े-खड़े सफर करना पड़ता; कभी-कभी धक्के भी खाने पड़ते। अैसी हालतमें सोने या काम करनेकी सहूलियत तो अुन्हें कौन देने लगा?

अुन दिनों देशके बड़े-बड़े नेता भी आम रिआयासे दूर-दूर रहते और गरीबों या मैले-कुचैले लोगोंके साथ मिलनेमें शरम-सी महसूस करते। बड़े-बड़े सरकारी अफसरोंकी तरह वे भी रेलके पहले या दूसरे दर्जेमें ही सफर करते। शायद अिसमें वे अपनी शान भी समझते थे। अैसे समय अकेले गांधीजीका तीसरे दर्जेमें सफर करना अेक अचरजकी बात थी। गांधीजी बैरिस्टर थे। दक्षिण अफ्रीकामें रह चुके थे और देशके नेता माने जाते थे।

अेक बार गांधीजी कलकत्तेमें स्वर्गीय श्री गोखलेजीके घर ठहरे थे। जब विदा होने लगे, तो गोखलेजी अुन्हें स्टेशन तक पहुँचाने चले। गांधीजीने कहा: 'आप क्यों तकलीफ करते हैं? रहिये, मैं चला जाअूँगा।' गोखलेजी न माने। अुन्होंने जवाब दिया: 'अगर आप औरोंकी तरह अूँचे दर्जेमें सफर करते, तो मैं घर ही रहता। लेकिन आप तो तीसरे दर्जेमें बैठनेवाले हैं; अिसलिअे मैं समझता हूँ, मुझे आपके साथ स्टेशन चलना ही चाहिये।'

अुस जमानेमें गांधीजीकी अैसी कद्र करनेवाले गोखलेजी जैसे कुछ अिने-गिने लोग ही होते थे। आम तौर पर तो मजाक अुड़ानेवालोंकी तादाद ही ज्यादा थी ।

यों तीसरे दर्जेकी मुसीबतें अुठाते-अुठाते गांधीजीको अपने देशकी दीन-हीन जनताका खूब अच्छा परिचय हो गया। अुसे नजदीकसे देखने, अुसकी कमजोरियों, खूबियों, खासियतों और आदतोंको समझने, अुसकी रग-रगसे वाकिफ होनेका अुन्हें बड़ा अच्छा मौका मिला। अपने देशवासियोंकी नब्जको जितना गांधीजी पहचान पाये, अुतना शायद ही कोअी दूसरा नेता पहचान सका हो । अिसलिअे आज वे देशके सच्चे हकीम बन सके हैं, और अुन्होंने जो नुस्खा दिया है, वह अिस बीमार मुल्कके लिअे मुफीद साबित हुआ है। यही वजह है कि आज छोटेसे लेकर बड़े तक सभी कोअी गांधीजीको बहुत गहरी अिज्जत और श्रद्धाकी नजरसे देखते हैं ।

३२

जेल-महल

जेलखानेको गांधीजी सिर्फ जेलखाना नहीं कहते, वे अुसे जेल-महल या जेल-मंदिर कहते हैं ।

जो जेलखानेसे डरते हैं, वे तो जेलखानेका नाम सुनते ही कांप अुठते हैं। अूंची-अूंची दीवारें, बड़े-बड़े दरवाजे, काले-काले भयानक पहरेदार, हथकड़ियों और बेड़ियोंकी झनकार! तिस पर राक्षस-जैसी बड़ी-बड़ी चक्कियां चलाना, बैल बनकर चड़सका पानी खींचना और कोल्हूमें बैलकी

तरह जुतना । अिनमें जरा कहीं कसूर हो गया, चूक हो गअी, तो दारोगाके डंडेसे पिटना ।

यह है जेलखानेकी तस्वीर ! अिन जेलखानोंमें अेक दफा बन्द हो जानेके बाद फिर न तो बाहरकी दुनियाकी कोअी चीज देखनेको मिलती है, न बाहरका कुछ सुनाअी पड़ता है ।

बड़े-बड़े चोर और लुटेरे भी कैदखानेके नामसे काँप अुठते हैं ।

लेकिन गांधीजीको वह जरा भी डरावना नहीं मालूम होता । वे अुसे महल समझते हैं । मन्दिर कहकर अुसकी महिमा बढ़ाते हैं । वे कअी दफा अिस महलके मेहमान रह चुके हैं, और देशके सैकड़ों-हजारों सत्याग्रहियोंके लिअे अिस महलके दरवाजे अुन्होंने खुले छुड़वा दिये हैं । लोग निधड़क अन्दर चले जाते हैं, और हँसते-हँसते वापस लौट आते हैं ।

जो देशकी सेवाके लिअे जेल जाते हैं, वे भला जेलसे डरें क्यों ? अुन्हें तो जेलखानेमें खुशी होती है ।

जेलमें अेक बार दाखिल होनेके बाद फिर अिन्सानको कोअी फिकर ही नहीं रह जाती । खानेका वक्त हुआ, खाना तैयार; पहननेको कपड़े चाहिये, कपड़े तैयार; दारोगा चौबीसों घण्टे आपकी खिदमतमें तैयार ! हिफाजतके लिअे पहरेदार हाजिर ! सन्तरी रात और दिन संगीन लिये खड़ा पहरा देनेको हाजिर !

दिनमें खूब मेहनत करनी पड़ती है; रातमें खर्राटेकी मीठी नींद आती है ।

अैसा सुख तो राजाको अपने राजमहलमें भी नसीब नहीं होता । अुस बेचारेको मारे फिकरके न खाना अच्छा लगता है, और न रात वह सुखकी नींद सो पाता है ।

जब गांधीजी दक्षिण अफ्रीकामें थे, तो वे वहाँके जेलखानोंके भी मेहमान रह चुके थे। हिन्दुस्तान आनेके बाद यहाँ भी वे कअी बार जेल हो आये हैं। कभी साबरमतीके जेलखानेको महल बनाकर रहे, तो कभी पूनाके पास यरवदाको मन्दिर मानकर रहे।

जेलवाले बेचारे अुन्हें जेलमें रखते शरमाते हैं। मगर करें क्या, हुकुमके चाकर जो ठहरे!

३३

तीन प्रतिज्ञायें

मोहनदास अब बड़े हो चुके थे। मैट्रिक पास कर चुके थे।

मावजी दवेने कहा: 'मोहनदासको विलायत भेज दो। वह बैरिस्टर बनकर आयेगा, और अपने बापकी जगह सँभालेगा।'

पर विलायत जाना आसान न था। पिताजी राजके दीवान तो रह चुके थे, लेकिन पैसा कुछ छोड़ नहीं गये थे। राजकी तरफसे मदद पानेकी कोशिश की, मगर अुसमें कामयाबी न मिली। बड़े भाअी दिलके फैयाज थे। अुन्होंने किसी भी तरह रुपयोंका बन्दोबस्त करनेका बीड़ा अुठाया।

लेकिन विलायत जानेमें अेक और भी रुकावट थी। अुन दिनों समुद्रयात्रा करनेवालोंका धर्म नष्ट हो जाता था! जात-बिरादरीवाले अैसोंको अपने साथ बैठाते नहीं थे। यह अेक बड़ा बेंडा सवाल था।

माता पुतलीबाअीने कहा: 'नहीं, मेरा मोहन विलायत नहीं जायगा। विलायत जानेसे जात जाती है। शराब पीने,

मांस खाने और कुचाल चलनेका डर रहता है। विलायत जाना अपना काम नहीं।'

अिस पर जान-पहचानके अेक साधुने रास्ता सुझाते हुअे कहा : 'माअी, अगर मोहन प्रतिज्ञा कर ले और वहाँ जाकर अपनी मरजादसे रहे, तो क्या हर्ज है ?'

माताजीने कहा : 'नहीं, फिर तो कोअी हर्ज नहीं रहता।'

साधुने मोहनदाससे कहा : 'मोहन बोलो, माताजीके सामने तीन प्रतिज्ञायें लेनी होंगी। लोगे ?'

'कैसी प्रतिज्ञायें ?'

'पहली, शराब नहीं पीओगे। दूसरी, मांस नहीं खाओगे। तीसरी, पराअी औरतको माँ-बहन समझोगे। बोलो, मंजूर हैं ये तीन बातें ?'

'जी हाँ, मंजूर हैं, दिलसे मंजूर हैं।'

'तो फिर आ जाओ सामने, और माँके चरण छूकर कहो।'

गांधीजीने माताजीके चरणोंमें झुकते हुअे कहा : 'माताजी, मैं शराब नहीं पीअूँगा, मांस नहीं खाअूँगा, पराअी स्त्रीको माँ-बहनके समान समझूँगा।'

गांधीजीके जीवनमें प्रतिज्ञाओं या व्रतोंका बड़ा महत्त्व रहा है। वे बचपनसे अिनमें मानते आये हैं। अुनका विश्वास है कि कमजोरीकी घड़ियोंमें ये प्रतिज्ञायें ही मनुष्यको गिरनेसे बचाती हैं, और अुसे मुकामसे हटने नहीं देतीं।

कहा जो है :

चन्द टरै, सूरज टरै, टरै जगत व्यवहार।
पै दृढ़ श्री हरिचन्द कौ, टरै न सत्य विचार॥

३४

'कुली' बैरिस्टर

गांधीजी विलायत गये। बैरिस्टर बने। वापस हिन्दुस्तान आये और हिन्दुस्तानसे धन कमाने दक्षिण अफ्रीका गये। गांधीजीको अपनी जान-पहचानके अेक मेमन व्यापारीके यहाँ काम मिला, और वे अुस व्यापारीके नौकर बनकर वहाँ पहुँचे।

वह अेक बिलकुल अनजान देश था। गांधीजी वहाँ धन कमाने गये थे। लेकिन दरअसल जो चीज अुन्होंने वहाँ कमाअी, अुसका तो शायद किसीने सपना भी नहीं देखा था। वह अेक अजीब चीज थी, और अजीब ढंगसे कमाअी गअी थी।

अफ्रीकाकी जमीन पर कदम रखते ही न जाने क्यों वहाँकी आबोहवामें गांधीजीका दम घुटने-सा लगा। वहाँ कदम-कदम पर हिन्दुस्तानियोंको बेअिज्जत होना पड़ता था। अिसमें छोटे-बड़े या अमीर-गरीबका कोअी भेद न था।

बहुतेरे हिन्दुस्तानी अुस मुल्कमें मजदूर या कुलीके नाते गये थे, अिसलिअे वहाँके गोरे लोग अुनसे नफरत करते और अुन्हें 'कुली' कहते थे। वहाँ जाकर हिन्दुस्तानी व्यापारी 'कुली व्यापारी', हिन्दुस्तानी वकील 'कुली वकील' और हिन्दुस्तानी बैरिस्टर 'कुली बैरिस्टर' कहलाता था। गांधीजी भी 'कुली बैरिस्टर' कहलाये।

वहाँके गोरे हिन्दुस्तानियोंको अपनेसे हलका मानते और अुनसे मिलना-जुलना अपनी शानके खिलाफ समझते थे। वे हिन्दुस्तानियोंको अपने साथ अुठने-बैठने भी न देते थे। विक्टोरियामें, ट्राममें, रेलगाड़ीमें और होटलोंमें, कहीं कोअी हिन्दुस्तानी अुनके साथ बैठ नहीं सकता था।

किसी हिन्दुस्तानी 'कुली' को अपने साथ रास्तेमें पैदल चलते देखकर भी वे आग-भभूका हो जाते थे। जहाँ अितनी नफरत थी, वहाँ हिन्दुस्तानियोंको किसी अुत्सव या जलसेमें बुलानेकी या अुनकी आवभगत करनेकी तो बात ही क्या?

पढ़े-लिखे और धनवान हिन्दुस्तानी भी अिन अपमानोंको सहनेके आदी हो चुके थे। परदेशमें मान-अपमानका खयाल न कर चुपचाप धन कमाने और देशमें जाकर अिज्जतदार कहलानेका रास्ता सब अख्तियार कर चुके थे।

लेकिन गांधीजी अिसे बरदाश्त न कर सके। जाते ही पग-पग पर अुनका अपमान होने लगा। दूसरे हिन्दुस्तानियोंकी तरह वे अिन अपमानोंको सह न सके। अुन्होंने विरोध शुरू किया, और सर अुठाकर, सीना तानकर चलने लगे। बदलेमें अुनको गालियाँ, धक्के और लातें मिलीं। गांधीजीने गालीका जवाब गालीसे, धक्केका धक्केसे और लातका लातसे देना मुनासिब न समझा। वे अपमानोंसे डरे नहीं, और डरानेवालोंके सामने झुके नहीं।

अेक दिन बैरिस्टर गांधी अपने किसी मित्रके साथ डरबन गये। डरबन अफ्रीकाका अेक शहर है। मित्रने अुन्हें वहाँकी अदालत दिखाअी।

अुन दिनों गांधीजी निहायत टीमटामसे रहते और बड़े शौकसे अंग्रेजी पोशाक पहनते थे; लेकिन माथे पर तब भी वे हिन्दुस्तानी पगड़ी ही रखते थे। डरबनकी अदालतमें भी वे अुस दिन वैसी ही पगड़ी पहनकर गये और वकीलोंके साथ बैठे।

जज साहबको अिस नअी सूरतके रंगढंग पर अचरज हुआ। अुन्होंने घूरकर गांधीजीको देखा और सोचा: 'यह कुली बैरिस्टर

माथे पर पगड़ी पहने वैठा है और अदालतका अपमान कर रहा है।'

कुछ देर तक घूरनेके वाद अुन्होंने गांधीजीसे कहा: 'अपनी पगड़ी अुतार दीजिये।'

गांधीजी अिस अपमानको सह न सके। तिलमिला अुठे। अुन्होंने सोचा: 'पगड़ी अुतारनेसे वेहतर है, सिर अुतारकर दे देना।'

गांधीजीने पगड़ी अुतारनेसे अिनकार कर दिया। वे अदालतका दीवानखाना छोड़कर वाहर चले गये।

३५

हाथ पकड़कर अुतारा

गांधीजीको डरवनसे प्रिटोरिया जाना था। अुन्होंने पहले दर्जेका टिकट कटाया और रेल पर सवार हुअे।

जव घरसे चलने लगे, तो लोगोंने समझाया और कहा: 'देखिये गांधीजी, यह हिन्दुस्तान नहीं है। यहाँ हम लोगोंको कोअी पहले दर्जेमें वैठने नहीं देता'। हम कहते हैं: 'खवरदार! आगे आप जानिये।'

गांधीजीने किसीकी सुनी नहीं। अुन दिनों वे मानते थे कि वैरिस्टरीकी शान वनाये रखनेके लिअे पहले दर्जेमें वैठना जरूरी है।

कुछ दूर तक किसीने कोअी छेड़छाड़ न की। रातको करीव नौ वजे गाड़ी मैरित्सवर्ग नामके स्टेशन पर खड़ी हुअी। यहींसे अेक गोरा मुसाफिर गांधीजीके डव्वेमें वैठा।

मगर वह बैठे क्योंकर? बैठते ही वह चकरा गया। अुसने देखा, गजब हो गया: पहले दर्जेमें और कुली!

गोरा मुँहसे कुछ न बोला। फौरन अुतरकर नीचे गया और स्टेशनके अेक-दो अफसरोंको बुला लाया। अफसर आये, टुकर-मुकर देखा किये मगर हिम्मत न हो कि कुछ कहें। आखिर अेक अफसरने गांधीजीके पास जाकर कहा — 'सामी! जरा सुनो, तुम्हें आखिरी डब्बेमें जाना होगा।' गांधीजीने कहा — 'मेरे पास पहले दर्जेका टिकट जो है।'

'कोअी हर्ज नहीं, टिकट रहने दो। मगर मैं कहता हूँ कि तुम्हें आखिरी डब्बेमें जाना होगा।'

"मैं भी कहता हूँ कि मैं डरबनसे अिसी डब्बेमें बैठाया गया हूँ, और अिसीमें जानेवाला हूँ।'

जवाब सुनकर अफसर तो दंग रह गया। 'अेक गोरे अफसरकी शानमें अेक कुलीकी यह हिम्मत?' अफसरने रोब गांठते हुअे कहा: 'हरगिज नहीं! तुम्हें अुतरना ही होगा; नहीं सिपाही आकर तुम्हें अुतार देगा।'

गांधीजीने भी साफ कह दिया: 'अच्छी बात है, आने दीजिये सिपाहीको। मैं अपनी मरजीसे नहीं अुतरूँगा।'

अफसर चिल्लाता हुआ गया और सिपाहीको बुला लाया। आते ही सिपाही डब्बेमें घुसा, हाथ पकड़कर गांधीजीको धकेला, नीचे अुतारा और सामान अुठाकर बाहर फेंक दिया।

गांधीजी अिस समय आपेमें न थे। वे सिरसे पैर तक हिल अुठे थे। खून खौल रहा था। वे न तो दूसरे डब्बेमें गये,

न अुन्होंने सामान ही छुआ। प्लैटफार्म पर खड़े रहे, सो खड़े ही रहे, और गाड़ी चल दी।

सारी रात प्लैटफार्म पर पड़े रहे। कड़ाकेकी सर्दी थी। साथमें ओवरकोट था। लेकिन फेंके हुअे सामानको आंख अुठाकर देखनेका भी दिल न होता था। कहीं सामान लेने बढ़े और फिर बेअिज्जती हुअी तो? बस, सारी रात ठण्डमें ठिठुरा किये, मगर सामानको हाथ न लगाया। जाड़ा खाते-खाते दिलमें कअी तरहके खयाल आये और चले गये।

'रेलमें बैठकर आगे जाने और फिर बेअिज्जत होनेसे फायदा क्या? बेहतर तो यह है कि वापस लौट जाअूं।'

'नहीं, नहीं, यह कैसे हो सकता है? जिसका बीड़ा अुठाया, अुसे अधबीचमें कैसे छोड़ा जा सकता है?'

'अिस देशमें रहकर धन कमानेसे फायदा क्या? बेहतर है कि हिन्दुस्तान वापस चला जाअूं।'

'नहीं, नहीं, यह कैसे हो सकता है? यह तो डरपोकोंका काम है। क्या तू डरपोक है?

'तो क्यों न गोरे सिपाही और गोरे अफसर पर मुकदमा चलाअूं, और यों दोनोंको अुनकी हिमाकतका सबक सिखाअूं?'

'फिजूलकी बात है। अिससे होगा क्या? यहांके तमाम हिन्दुस्तानियोंके सर 'कुलीपन' का जो कलंक लगा हुआ है, क्या वह अिससे धुलेगा?'

अिस तरह सोचते-सोचते गांधीजीने अपने मनको समझा लिया और अपमानकी अिस कड़वी घूंटको पीकर रह गये।

शिकरमकी बीती

प्रिटोरियाका रास्ता मुसीवतोंका रास्ता सावित हुआ। अेकका किस्सा सुन चुके। दूसरीका सुनिये। अुन दिनों चार्ल्स-टाअुनसे जोहानिसवर्ग तक रेल न थी। शिकरम चलती थी।

गांधीजीने शिकरमके लिअे वाकायदा टिकट खरीदा। पर ज्यों ही शिकरम पर सवार होने चले, गोरे शिकरमवालेने रोका। वोला: 'सामी! तुम्हें नहीं वैठायेंगे। तुम्हारा टिकट पुराना है। कुलका है।'

अुसने सोचा: 'परदेशी आदमी है, अजनवी है, वहानेसे काम चलता हो तो क्यों न चला लूँ?' मगर दर-असल अुसकी नीयत कुछ और ही थी। वह नहीं चाहता था कि अपनी शिकरममें गोरे मुसाफिरोंके साथ काले कुलीको वैठावे।

लेकिन यह झाँसेवाजी क्योंकर चले? आखिर शिकरमके अन्दर गोरोंके साथ तो नहीं, वाहर कोचवानकी बरावरीसे गांधीजी वैठाये गये। गांधीजी वहुत सिटपिटाये — मनमें अुथल-पुथल मच गअी: 'मैं यहाँ क्यों वैठूँ? मुझे अन्दर क्यों नहीं वैठाया जाता?'

लेकिन अिस अपमानको भी वे पी गये और वाहर कोचवानके पास जा वैठे।

कुछ ही दूर गये थे कि मुसीवत शुरू हुअी। शिकरमका गोरा मालिक साथमें था। अुसकी अिच्छा हुअी कि वह वाहर वैठे और वीड़ी पीये। शायद हवा खानेका भी दिल रहा हो। लेकिन वाहर तो गांधीजी वैठे थे। गोरेने, अपनी जान, अिसका भी रास्ता निकाल लिया। कोचवानके पास टाटका

अेक गन्दा-सा टुकड़ा पड़ा था। गोरेने अुसे लेकर पैर रखनेके पटिये पर फैला दिया और गांधीजीसे बोला: 'अे सामी, तू यहाँ बैठ, मैं कोचवानकी बराबरीसे बैठूंगा।'

सुनते ही गांधीजी तिलमिला अुठे। सामने पहाड़-सा अूंचा-पूरा और मजबूत गोरा था, और मुकाबलेमें दुबले-पतले और अकेले गांधीजी थे। मामला टेढ़ा था, मगर गांधीजी डरे नहीं। क्या डरकर अपमान सह लेते?

गांधीजीने साफ कह दिया: 'देखिये, आपकी पहली गलती तो यह है कि आपने मुझे यहाँ बैठाया। मैंने भी जिद नहीं की, बैठ गया। अब आप बाहर बैठना चाहते हैं। आपको बीड़ी पीनी है। बैठिये, पीजिये! मगर मुझसे क्यों कहते हैं कि मैं आपके पैरोंमें बैठूं? मैं अन्दर शिकरममें जानेको तैयार हूँ। आपके पैरों तले हरगिज न बैठूंगा।'

गांधीजी अभी अपनी बात भी पूरी नहीं कर पाये थे कि गोरा भिन्ना अुठा! अुसने तड़ातड़ तमाचे जड़ने शुरू कर दिये, और हाथ पकड़कर अुन्हें नीचे घसीटने लगा। गांधीजीने बैठकके पास लगे हुअे पीतलके सीखचोंको कटकटाकर पकड़ लिया और मनमें तय कर लिया कि चाहे हाथ अुखड़ जायँ, पर सलाअियाँ नहीं छोड़ूंगा।

गोरा गालियाँ दे रहा था; घसीट रहा था; और गांधीजी सीखचोंको पकड़े अड़े थे। न कुछ बोले, न अपनी जगह छोड़ी। दूसरे गोरे मुसाफिरोंने जब देखा कि मामला बढ़ रहा है, तो बाहर आये, बीच-बचाव किया, शिकरमवालेको बुरा-भला कहा और गांधीजीको छुड़ाया।

धक्का

प्रिटोरियामें गांधीजी रोज शामको घरसे हवाखोरीके लिअे निकलते और खुले मैदानमें टहलकर लौट आते।

सड़कके किनारे दोनों ओर पैदल चलनेवालोंके लिअे पक्का रास्ता बना था। गांधीजी अिसी रास्ते रोज आते-जाते थे अिसी रास्ते पर प्रिटोरियाके प्रधान मंत्री मिस्टर क्रूगरका मकान था। अेक मामूली-सा सीधा-सादा मकान; मगर दरवाजे पर सन्तरीका पहरा था। अिसीसे लोग समझते थे कि किसी आला अफसरका मकान है।

गांधीजी हमेशा अिसी रास्ते जाते थे; हमेशा प्रधान मंत्री मिस्टर क्रूगरके घरके सामनेसे गुजरते थे; सन्तरी हमेशा अुन्हें देखता था, लेकिन कभी कुछ कहता न था।

अुस दिन पता नहीं क्या हुआ। शायद सन्तरी बदल था। नये सन्तरीने सोचा: 'अरे यह काला कुली पटरी पर चलता है? और सो भी प्रधान मंत्रीके सामने? वाह रे हिमाकत! बच्चाको मजा चखाना चाहिये।'

(अुसने आव देखा न ताव; न बोला न चाला न चेताया; बस अेकाअेक आगे बढ़कर गांधीजीको अेक धक्का दिया, लात मारी और प्लैटफार्मसे नीचे गिरा दिया।

गांधीजी चौंक पड़े। यह कैसा गजब है? कैसा सितम? खड़े होकर सिपाहीसे जवाब तलब करने ही वाले थे, कि सामनेसे अेक घुड़सवार आया और बोला: 'मिस्टर गांधी, मैंने सारी हकीकत अपनी आँखों देखी है। तुम अिस पर मुकदमा चलाओ, मैं गवाही दूँगा।'

यह घुड़सवार अेक गोरा था और गांधीजीका दोस्त था।

गांधीजीने कहा: 'नहीं, अिसमें मुकदमेकी क्या जरूरत है। यह जैसे हजारों हिन्दुस्तानियोंके साथ पेश आता है, वैसे ही मेरे साथ भी पेश आया। बेचारा क्या करे?'

दोस्तने कहा: 'नहीं, यह ठीक नहीं है; अैसोंको दुरुस्त करना ही चाहिये।'

गांधीजीने समझाते हुअे कहा: 'भाअी, जहाँ सभी गोरे हमें 'कुली' समझते और हमसे नफरत करते हैं, तहाँ अिस बेचारे नासमझ सिपाहीका क्या कसूर?'

फिर तो अुस गोरे मित्रने सिपाहीको सारी हकीकत समझाअी। बेचारा बहुत सिटपिटाया और आकर गांधीजीसे माफी माँगने लगा।

३८

भाअीने पीट दिया

दक्षिण अफ्रीकामें मीर आलम नामका अेक पठान रहता था। तोशक-तकिये, गादी-गदेले भरकर बेचना अुसका पेशा था। अुसीसे अुसका गुजर-बसर होता था।

मीर आलमकी गांधीजीसे अच्छी जान-पहचान थी। आफत-मुसीबतमें, काम-काजमें वह हमेशा गांधीजीकी सलाहसे चलता, और अुनकी अिज्जत करता था। जब गांधीजीने दक्षिण अफ्रीकामें सत्याग्रह शुरू किया, तो मीर आलम भी अुसमें शामिल हुआ — दिलचस्पी लेने लगा।

सत्याग्रहके सिलसिलेमें गांधीजीको जेल जाना पड़ा। बहुतसे दूसरे हिन्दुस्तानियोंने भी बड़ी बहादुरी दिखायी और खुशी-खुशी जेल गये। आखिर सरकार झुकी और समझौता हुआ। कुछ लोगोंको यह समझौता पसन्द नहीं आया। मीर आलम अुन्हींमें था। वह गांधीजी पर बहुत गुस्सा हुआ।

अफ्रीकामें अुन दिनों अेक बहुत ही खराब और अपमानजनक कानून बना था। अिस कानूनके अनुसार वहाँके सभी हिन्दुस्तानियोंको सरकारी परवाने लेने पड़ते थे और अुन परवानों पर अपनी दसों अँगुलियोंकी छाप देनी पड़ती थी। वे परवाने हरअेकको रात-दिन अपने पास रखने पड़ते थे। जिसके पास परवाना न होता, अुसे सजा ठुक जाती। अैसा मनहूस यह कानून था। हिन्दुस्तानियोंने अिसी कानूनके खिलाफ सत्याग्रह छेड़ा था। समझौतेमें यह तय पाया कि जो चाहे परवाना ले; न चाहे, न ले।

सत्याग्रहकी जीत हुअी। सरकारने गांधीजीको जेलसे रिहा कर दिया। दूसरे सब सत्याग्रही भी छोड़ दिये गये। अिसके बाद अिस जीतकी खुशीमें अेक जलसा हुआ।

जलसेमें मीर आलम भी मौजूद था। अुसने खड़े होकर पूछा: 'अिसमें हमारी जीत क्या हुअी? परवाना लेनेकी बात तो कायम ही रही न?'

गांधीजीने समझाते हुअे कहा: 'जो न लेना चाहे, न ले। अितनी आजादी अिसमें रखी गअी है। आप न चाहें, न लें।'

'और आप?'

'मैं तो सबसे पहले लूंगा और दसों अँगुलियोंकी छाप भी दूंगा।'

'लोगोंको शक है कि आप सरकारसे पैसा खा गये हैं। आपने रिश्वत ली है।'

'मैं कहता हूँ, यह गलत है। अिसे कोओी न माने।'

'अच्छी बात है; बन्दा भी खुदाकी कसम खाकर कहता है कि जो अव्वल परवाना लेने जायगा, वह मेरे हाथों मौत पायगा।'

गांधीजीने कहा: 'अपने भाओीके हाथों मरनेमें मुझे खुशी ही होगी। मगर मैं सचाओीसे हरगिज न हटूँगा।'

अिसके कोओी तीन महीने बादका किस्सा है। परवाना लेनेकी तारीख नजदीक आ लगी। गांधीजी और दूसरे साथी नेताओंने यह तय कर लिया था कि वे सबसे पहले परवाने लेने जायँगे।

मीर आलम भी अपनी बात भूला न था। गुस्सेसे बेताब होकर वह मन ही मन बोल अुठा: 'देखूँगा, वे कैसे परवाने लेते हैं।' अिसके बाद अपने दो-तीन पठान दोस्तोंको साथ लेकर वह अेक जगह रास्ता रोककर खड़ा हो गया।

गांधीजी अुधरसे गुजरे। मीर आलमका दस्तूर था कि जब कभी गांधीजीसे मिलता, बड़े अदबके साथ अुन्हें सलाम करता। अुसके दिलमें अुनके लिअे बड़ी अिज्जत थी। लेकिन आज वह फिरण्ट रहा। सलाम नहीं किया। गांधीजीने अुसकी आँखोंको देखा, तो ताड़ गये कि खून सवार है; जरूर कोओी अनहोनी होगी।

जब पठान चुप रहा, तो गांधीजीने मुसकराते हुअे पूछा: 'कहो भाओी मीर आलम, कैसे हो?' अुसने अुसी तावमें सर झुकाते हुअे कहा: 'अच्छा हूँ।'

समय होते ही गांधीजीका दल परवाना लेने चला। मीर आलम भी अपने दोस्तोंके साथ अुनके पीछे हो लिया। जब आफिस कुछ ही दूर रह गया, तो मीर आलम लपककर गांधीजीके सामने जा पहुँचा और बोला : 'कहाँ जाते हो?'

'दसों अँगुलियोंकी छाप देने और परवाना लेने। चाहो, तुम भी चलो। तुम्हें अँगुलियोंकी छाप न देनी होगी।'

अिसी वक्त पीछेसे किसीने कसकर लाठी तौली और वह खटाक् गांधीजीकी खोपड़ी पर आकर गिरी! पहले ही वारमें गांधीजी गश खा गये, और जमीन पर गिर पड़े। बेहोशीकी हालतमें भी पठान अुन्हें डण्डों और लातोंसे मारते रहे। गांधीजीके साथ जो दूसरे नेता थे, अुन्होंने बीच-बचावकी कोशिश की, तो वे भी बेतरह पिटे!

यों मार-पीटकर पठानोंने रास्ता नापा, लेकिन राहगीरोंने अुन्हें पकड़ लिया और पुलिसमें दे दिया।

बेहोशीकी हालतमें लोग गांधीजीको अुठाकर पासके अेक मकानमें ले गये। वहाँ वे सुलाये गये और अुनकी मरहम-पट्टी हुअी। अुनका अेक होंठ फट गया था, दाँतमें चोट पहुँची थी और पसलियोंमें दर्द हो रहा था।

कुछ देर बाद जब होश आया तो जानते हो, पहला सवाल गांधीजीने क्या पूछा?

'मीर आलम कहाँ है?'

अेक सेवकने कहा: 'आप आराम कीजिये। मीर आलमको और अुसके साथियोंको पुलिस पकड़कर ले गअी है।'

गांधीजी चौंक पड़े। अुन्होंने कहा : 'नहीं, नहीं, अुन लोगोंको तुरन्त छुड़ाना चाहिये।' और अुन्होंने अुसी दम पुलिस अफसरको अेक चिट्ठी लिखी और अुनसे प्रार्थना की कि वे अुन पठान भाअियोंको छोड़ दें। गांधीजी नहीं चाहते थे कि अुन्हें सजा हो।

गांधीजीकी चिट्ठी पाकर पुलिस अफसरने मीर आलमको और अुसके साथियोंको रिहा कर दिया। लेकिन बादमें जब वहांके गोरोंने हायतोबा मचाअी, तो पुलिसने अुन्हें फिर गिरफ्तार कर लिया और छः महीनोंकी सजा ठोंक दी।

अिस मारपीटमें गांधीजीके अगले दांत गये। वह गड्ढा आज भी अुनके मुंहकी शोभा बढ़ा रहा है। भाअीका दिया हुआ, प्रेमसे सहा हुआ, और सत्यकी रक्षामें मिला हुआ वह अेक अुपहार है — तोहफा है।

३९

मीर आलम मुरीद बना

अब आगेका मजेदार किस्सा सुनिये।

दक्षिण अफ्रीकाकी सरकार अपनी बात पर कायम न रही। बस, गांधीजीने फिरसे लड़ाअी छेड़ दी।

लोगोंसे कहा गया कि सरकारने धोखा दिया है। हमें फिरसे सत्याग्रह करना है। जो परवाने हमने अपनी राजी-खुशीसे लिये हैं, अुनको अिकट्ठा करके जला देना है। जिन्हें लड़ाअीमें शामिल होना हो, वे अपने अपने परवाने लौटा दें।

लोग मारे खुशीके पागल-पागल हो गये। गांधीजीके दफ्तरमें परवानोंकी झड़ी लग गअी।

परवानोंकी होली जलानेका दिन तय हुआ। अुस दिन अेक बड़ी भारी आम सभा हुअी। सभाके बीचोंबीच परवानोंका ढेर रचा गया।

गांधीजीने पूछा: 'भाअियो! साफ-साफ कहना, आपने अपनी राजी-खुशीसे ये परवाने जलानेको दिये हैं न?'

हजारों अेक साथ बोल अुठे: 'जी हाँ, राजी-खुशीसे दिये हैं।'

'अब भी वक्त है, जो चाहें, अपना परवाना वापस ले सकते हैं।'

'नहीं, नहीं, हम वापस नहीं लेंगे।'

'देखिये, खबरदार! लड़ाअी जोरकी ठनेगी, जेल जाना होगा।'

'परवा नहीं, जेल जायँगे! आप अिनमें आग लगा दीजिये।'

अितनेमें सभाके बीच अेक पठान खड़ा हुआ और बोला:

'गांधी भाअी लो, यह मेरा परवाना भी लो और जला दो। मैं तुम्हारा गुनहगार हूँ। मुझे माफ करो। मैंने तुम्हें पहचाना न था। तुम सच्चे बहादुर हो।'

यह पठान और कोअी नहीं, हमारा मीर आलम ही था।

भरी सभामें गांधीजीने अुससे हाथ मिलाया। सारी सभा तालियोंकी गड़गड़ाहटसे गूंज अुठी। गांधीजीने परवानों पर किरासिन छिड़का और आग जला दी। होली धधक अुठी।

बस, मीर आलम अुसी दिनसे गांधीजीका भक्त (मुरीद) बन गया, और अुनके न चाहते हुअे भी रात-दिन परछाअींकी तरह अुनके साथ रहने लगा। वह डरता था कि कहीं कोअी गांधीजीको सताये न!

४०

जबर्दस्त तूफान

गांधीजी अफ्रीकासे हिन्दुस्तान आये। कुछ दिन यहाँ रहे, और वापस दक्षिण अफ्रीका जानेके लिअे जहाज पर सवार हुअे। यह अुनकी दूसरी यात्रा थी। अिस बार श्रीमती कस्तूरबा और बच्चे भी अुनके साथ थे। रास्तेमें जहाज अेक तूफानसे घिर गया। जोरोंका तूफान था। मुसाफिर डर गये। खाना-पीना हराम हो गया। अुल्टियों और अुछाटोंके मारे लोग दिक आ गये। अैसे समय गांधीजीने सबकी सेवा की। सबको ढारस बँधाया। लेकिन सच्चा तूफान तो डरबनमें आनेवाला था।

डरबनके गोरोंको खबर मिल चुकी थी कि गांधी वापस आ रहा है। सब आग-भभूका हो अुठे। बोले: 'फिर वह हमारे देशमें आ रहा है? अुसीने न हिन्दुस्तान जाकर हमारी शिकायत की? वही न हमें सारी दुनियामें बदनाम कर रहा है? बस, निकाल बाहर करो अुसे। मजाल है, जो यहाँ कदम रखे।'

कुछ लोगोंने कहा: 'यह गांधी बहुत ही बदमिजाज है; बड़ा मक्कार है; नाकों दम कर रखा है अिसने। किसीको सुखसे रहने ही नहीं देता। बस, हर बातमें 'कुलियों' को हमारे खिलाफ भड़काता रहता है। कसम खाओ कि अुसे अपनी जमीन पर पैर न रखने देंगे।'

दूसरोंने गरज कर कहा: 'और अबकी तो वह अपने बीबी-बच्चोंको लेकर आ रहा है। मानो, यहीं अड्डा जमाना चाहता है। हम भी देखेंगे, कि बच्चा कैसे आते हैं और कैसे बसते हैं।'

तीसरे दलने चिल्लाकर कहा : 'कुछ खबर भी है, यारो ? अबकी वह अकेला नहीं आ रहा; दो जहाज भर कर 'कुलियों' को अपने साथ ला रहा है ।'

'लावे बलासे; लेकिन यहाँ अुसे अुतरने कौन देगा ?'

'चलो, सरकारसे कहा जाय, मनाही हुक्म जारी कर दे ।'

'और अगर सरकार न सुने, तो हमीं गांधीको अुठाकर सागरमें फेंक दें ।'

डरबनके गोरोंने सच-झूठ बहुत-कुछ सुन रखा था । अिसीलिअे वे अितने भिन्ना रहे थे ।

अिधर गांधीजीको गोरोंके अिस गुस्सेका कोअी पता ही न था । अुनका जहाज डरबनके बन्दरगाहमें आ लगा ।

बन्दरगाहके अफसरोंने देखते ही मनाही कर दी । कहला दिया :

'दूर रहो ! अपना जहाज यहाँ न लगाओ । यहाँ अुतरनेकी मनाही है । तुम्हारे देशमें प्लेग फैला है । तुम्हें 'क्वारण्टीन' में रहना पड़ेगा ।'

'लेकिन हमारे जहाजमें कोअी बीमार नहीं है ।'

'भले न हो ! क्वारण्टीनमें तो रहना ही होगा ।'

'कै दिन रहना होगा ?'

'२३ दिन ।'

गांधीजीको अचम्भा हुआ । ये बन्दरगाहवाले अितना कड़ा रुख क्यों दिखा रहे हैं ? धीमे-धीमे डरबनकी बातें कान पर आती गअीं और भेद खुलता गया ।

कुछ लोग जहाजके मुसाफिरोंको डराने लगे : 'अरे भाअी, लौट जाओ! नहीं, समन्दरमें डुबो दिये जाओगे।'

कुछने जहाजके मालिकको डाँटना शुरू किया : 'अपना जहाज वापस हिन्दुस्तान ले जा। वरना बरबाद हो जायगा।'

लेकिन धन्य है अुनको कि अुनमें से न तो कोअी डरा, और न कोअी डिगा।

२३ दिन तक सब समुद्रकी हवा खाते रहे, और बड़े मजेसे जहाजमें ये दिन गुजार दिये। आखिर क्वारण्टीनसे छुटकारा मिला। सभी हँसते-खेलते हिम्मतके साथ डरबनके बन्दर पर अुतरे। गोरे मुँह ताकते रह गये।

अितनेमें अेक अफसरका संदेशा आया : 'गांधीजीसे कह दो, दिनमें जहाजसे न अुतरें; नहीं, जानका खतरा है।'

अिस पर अेक मित्रने गांधीजीसे पूछा : 'कहिये, क्या अिरादा है? आपको डर तो नहीं लगता न?'

'नहीं, डरकी क्या बात है?'

'तो फिर आअिये, दिन-दहाड़े चलें। मैं आपके साथ हूँ। क्या हम चोर हैं, जो अँधेरेमें जायँ?'

गांधीजीने अपने परिवारके लोगोंको अेक गाड़ीमें बैठाया; और शहरकी तरफ रवाना किया; और खुद अपने दोस्तके साथ पैदल डरबनकी ओर चले।

दोनों दोस्त शहरमें दाखिल हुअे। कुछ दूर तक तो किसीने गांधीजीको पहचाना ही नहीं। बादमें कुछ गोरे छोकरोंने,

जो अुधरसे जा रहे थे, गांधीजीको देख लिया । अुस देशमें वैसी पगड़ी पहननेवाले गांधीजी अकेले ही थे, अिसलिअे फौरन पहचान लिये गये ।

अुन्हें देखते ही छोकरोंने शोर मचाना शुरू कर दिया :

'गांधी है ! गांधी है !

मारो ! मारो !

पकड़ो ! पकड़ो !'

शुरू-शुरूमें लौंडे चिल्लाते रहे । फिर कंकर फेंकने लगे । अितनेमें बच्चोंके साथ बड़े-बूढ़े भी शामिल हो गये ।

मित्रने गांधीजीसे कहा : 'जानका खतरा है । जल्दी भाग निकलना चाहिये । चलिये, रिक्शामें बैठ चलें ।'

गांधीजीने चौंककर पूछा : 'रिक्शामें ? भाअी, रिक्शा तो आदमी चलाता है । मुझे वह पसन्द नहीं । मैं नहीं बैठूंगा ।'

'अजी साहब, बैठ चलिये ! पसन्दकी अेक ही कही । यहाँ जानके लाले पड़े हैं, आफतके बादल सिर पर मँडरा रहे हैं, और आप पसन्दकी चर्चा चला रहे हैं ।'

दोस्तने रिक्शावालेको आवाज दी । रिक्शा आअी । गांधीजी अपने मनको समझाकर अुस पर सवार होना ही चाहते थे कि अितनेमें लोगोंकी अुस टोलीने रिक्शावालेको घेर लिया ।

डपटकर बोले : 'खबरदार ! भूलकर भी अिन्हें न बैठाना । नहीं, रिक्शा तोड़ डालेंगे । सिर फोड़ डालेंगे ।'

बेचारा हबशी ! अुसकी हिम्मत ही कितनी ? डर गया । 'खा' (ना) कहकर लौट पड़ा । जान लेकर भागा ।

अब कोअी चारा न रहा । आगे गांधीजी थे । पीछे लोगोंकी भीड़ थी । जैसे-जैसे बढ़ते गये, भीड़ भी दुगुनी-चौगुनी होती गअी । आगे गांधीजी चल रहे थे, पीछे गोरोंका अेक जंगी जुलूस आ रहा था ।

शरारतियोंकी अुस भीड़में से अेक मोटा-ताजा गोरा सामने आया । अुसने गांधीजीके साथीको अपनी बगलमें दबाया, और अुन्हें लेकर अेक ओर हट गया ।

अब मैदान साफ था । गांधीजी अकेले पड़ गये थे । लोगोंने अुन पर गालियोंकी बौछार और पत्थरोंकी मार शुरू कर दी । अेक हजरत जो आगे बढ़े, तो गांधीजीकी पगड़ी अुछालकर चलते बने । अेक दूसरे मुस्टण्डे गोरेने दो चपतें रसीद कीं, और लात मारकर छू हुआ ।

अकेले गांधीजी क्या करते ? चक्कर खाकर गिरने ही वाले थे कि पासके अेक घरकी जाफरी हाथमें आ गअी । थामकर खड़े हो गये । कुछ देर सुस्ताये और फिर चल पड़े ।

बड़ा नाजुक मौका था । गांधीजी घिर गये थे । जानका खतरा था । अितनेमें अुधरसे अेक बहादुर गोरी महिला गुजरीं । वह डरबनके पुलिस अफसरकी पत्नी थीं और गांधीजीको पहचानती थीं । वह दौड़कर गांधीजीके पास पहुँच गअीं और धूप न रहते हुअे भी अुनके सिर पर अपने छातेकी छाया करके साथ-साथ चलने लगीं ।

गोरे सिटपिटा गये । अुन्हें अिस नेक और बहादुर औरतका लिहाज रखना ही पड़ा । भीड़ कुछ छँटी । लोग कुछ हटकर चलने

लगे । फिर भी बीच-बीचमें कुछ मनचले लोग दौड़कर आते और गांधीजीको चपतिया कर चले जाते थे । अुन्हें अिसीमें मजा आता था ।

अितनेमें पुलिसका अेक दस्ता आ पहुँचा । अुसने शरारतियोंकी भीड़को तितर-बितर किया और गांधीजीको अुनकी अिच्छाके अनुसार अुनके मित्र और डरबनके मशहूर व्यापारी पारसी रुस्तमजीके घर पहुँचा दिया ।

गोरोंकी वह शैतानी टोली अुस समय तो बिखर गअी; लेकिन रातमें फिर हजारों गोरे पारसी रुस्तमजीके घरके सामने अिकट्ठा हो गये और शोर मचाने लगे ।

अुनकी अेक ही पुकार थी—अेक ही नारा :

'गांधीको सौंप दो, नहीं, घर फूंक देंगे ।'

मगर रुस्तमजी थे कि टससे मस न हुअे ।

अिस मौके पर डरबनके पुलिस अफसरने बड़ी चतुराअीसे काम लिया । अुन्होंने अपने भरोसेके अेक अफसरको रुस्तमजीके घरमें भेजा । गांधीजीको सलाह दी कि वे भेस बदलकर वहाँसे खिसक जायँ । फिर खुद लोगोंकी भीड़में जाकर मिल गये और अुसे बहलाने लगे ।

अुन्होंने रुस्तमजीके दरवाजेके सामने अपने लिअे अेक तख्त रखवा लिया; अुस पर चढ़ गये और लोगोंसे गपशप लड़ाने लगे । अेक तुक जोड़ ली और लोगोंसे गवाने लगे :

"आओ रे आओ ! गांधीको लाओ !
जिन्दा जलाओ ! फाँसी चढ़ाओ !
अिमलीके पेड़ पर फाँसी चढ़ाओ !"

लोग झूम-झूमकर गाने लगे ।

अमलदारने अपने मनमें कहा : 'बच्चो, चिल्लाते रहो, जितना चिल्लाना चाहो ! दरवाजा मेरे कब्जेमें है। जाओगे किधर ?

बाहर यह तमाशा हो रहा था। अन्दर गांधीजी पुलिस अफसरकी भेजी हुअी देशी पुलिसकी पोशाक पहन रहे थे। गांधीजीको यह चीज जँची तो नहीं, मगर मजबूरी थी। जब पहन चुके तो दोनों बगलके तहखानोंमें घुसे। कुछ देरमें सिरेके अेक तहखानेका दरवाजा खुला। दो जवान अुसमें से बाहर निकले; दोनों बलवाअियोंकी भीड़में पैठे और बेदाग अुस पार निकल गये। अुनको तरफ किसीने देखा तक नहीं। फुरसत किसे थी जो देखे ?

लोग तो झूम-झूम कर अुस तुकको गानेमें लगे थे :

"आओ रे आओ ! गांधीको लाओ !
जिन्दा जलाओ ! फांसी चढ़ाओ !
अिमलीके पेड़ पर फाँसी चढ़ाओ !"

जब पुलिस अफसरको खबर मिली कि गांधीजी सही-सलामत दूसरे मुकाम पर पहुँच गये हैं, तो अुसने फौरन बाजी अुलट दी और लोगोंसे कहा : 'दोस्तो, अब आप थक गये होंगे। जाअिये, घर जाकर आराम कीजिये।'

लोग अेकदम पुकार अुठे : 'नहीं जायेंगे; हरगिज न जायेंगे। गांधी कहाँ है ? गांधीको लाओ !'

अमलदारने जरा हँसकर कहा : 'मान लीजिये, आपका शिकार आपके सामनेसे निकल भागा हो, तो आप क्या कीजियेगा ?

'वाह, खूब कही; निकल भागा हो! कैसे निकल भागा हो? हम अितने जो खड़े हैं यहाँ?'

'तो मैं आपसे सच कहता हूँ कि आपका शिकार आप ही के बीचसे होकर निकल गया है।'

'झूठ, सरासर झूठ! हम हरगिज न मानेंगे।'

'अच्छी बात है; अगर अपने बूढ़े फौजदारका आपको यकीन नहीं है, तो आप खुद अन्दर जाकर देख लीजिये। लेकिन सब नहीं जा सकेंगे। अपनेमें से दो-चारको चुनकर भेज दीजिये।'

लोगोंने पंचोंको अन्दर भेजा कि जाकर देख आवें। अुन्हें यकीन हो गया कि गांधीजी घरमें नहीं हैं। जब लोगोंने सुना तो चकराये। खुशमिजाज फौजदारने कहा: 'दोस्तो, आपने अपनी पुलिसकी बात नहीं रखी, तो पुलिसको आपसे छल करना पड़ा। हम लोग तो आपके नौकर ठहरे; किसी भी तरह अपना काम बजा लाना हमारा फर्ज है न? अब आप मेहरबानी करके जाअिये। पुलिसकी जीत हुअी; आप लोगोंकी हार।'

जो दाँत कटकटाते आये थे, वही खिलखिलाते हुअे लौट गये। अिस बवण्डरके बाद कअी दिन बीत गये। गांधीजीकी चोटें दुरुस्त हो गअीं। गोरोंके दिमाग ठण्डे पड़ गये। सब अपने-अपने कामधन्धेसे लगे।

मारपीट करनेवाले गोरोंका खयाल था कि वह 'कुली' बैरिस्टर अुन्हें छोड़ेगा नहीं; मुकदमा चलायेगा; सजा ठुकवायेगा।

सरकारवाले रोज राह देखते थे कि गांधी आज शिकायत करेंगे, कल करेंगे।

लेकिन गांधीजीका तो तरीका ही कुछ और था। दंगाअियोंको वे दयाकी दृष्टिसे देखते थे। मारनेवालोंको मन ही मन माफ कर चुके थे। वे जानते थे कि बेचारे नासमझ हैं।

अेक दिन गांधीजीको डरबनके अेक बड़े अफसरने बुलाया और कहा :

'गांधीजी, आपको जो चोट पहुँची, जो परेशानी अुठानी पड़ी, अुसके लिअे हम सचमुच दुःखी हैं। मैं मानता हूँ कि जिन्होंने आपको सताया, वे सब गोरे थे। लेकिन गोरे हुअे तो क्या हुआ ? वे गुनहगार हैं। सजावार हैं। यह न समझिये कि वे बच जायँगे। सरकार चाहती है कि अुन्हें सजा हो। आप जरा अुनकी शनाख्त करवा दीजिये।'

गांधीजीने बड़ी शान्तिके साथ कहा :

'अिस सहानुभूतिके लिअे मैं आपका आभारी हूँ। लेकिन दरअसल मुझे किसीसे कोअी शिकायत नहीं।'

'आप अपराधियोंको पहचान तो सकते हैं न ?'

'शायद दो-चारको पहचान सकूँ। लेकिन मैं मानता हूँ, अुन बेचारोंका कोअी कसूर नहीं है।'

'गांधीजी, आप यह क्या कहते हैं ? क्या अुन दुष्टोंने आपको पीटा नहीं ? सताया नहीं ?'

गांधीजीसे न रहा गया। अुन्होंने बिना झिझके साफ-साफ गोरे हाकिमसे कह दिया : 'माफ कीजिये, असली गुनहगार तो आप लोग हैं। आप-जैसोंने अुन्हें अुभाड़ा और वे दंगाअी बन गये। अुन बेचारोंका कसूर क्या है ? अुन्हें सजा किस बातकी दिलाअूँ ?'

हमारे पापका फल

जब गोरे हमें 'कुली' कहते हैं, तो हम तिलमिला अुठते हैं। अब सोचिये कि जिनको हम ढेढ़, भंगी, अछूत वगैरा कहते हैं, अुन पर क्या बीतती होगी?

हम अिन लोगोंका कितना अपमान करते हैं? अिनको न हम छूते हैं, न अिन्हें अपनी बस्तियोंमें रहने देते हैं, और न अपनी सड़कों पर आजादीसे चलने देते हैं। जब कभी अिन्हें हमारे बीचसे निकलना पड़ता है, तो चिल्लाते-चिल्लाते बेचारोंका गला बैठ जाता है:

'दूर रहना, माँ-बाप!'

'छूना नहीं, मालिक!'

'आप ही के भंगी हैं, अन्नदाता!'

कैसा घोर अपमान है?

बेचारे प्यासों मरते हैं, पर हम हैं कि अपने कुओं पर अुन्हें पानी तक नहीं भरने देते।

गाँवके सभी लड़के स्कूलमें पढ़ते हैं, पर अिनके लड़कोंको हम स्कूलका मुँह नहीं देखने देते। अुन्हें दाखिल नहीं करते। करते हैं तो दूर अेक कोनेमें बैठाते हैं।

रेलगाड़ीमें सभी बैठते हैं, लेकिन ढेढ़, भंगी या चमारको देखते ही हम 'जगह नहीं, जगह नहीं' चिल्ला अुठते हैं।

मन्दिरमें गाँवके सभी लोग देव-दर्शनको जाते हैं। लेकिन अिन अभागोंके लिअे भगवान्के घरके दरवाजे भी बन्द हैं।

यह कोअी मामूली दुःख है? छोटी-मोटी बात है?

ये बेचारे गजरदम अुठकर हमारी सड़कें बुहारते हैं, गटरें घोते हैं, गाँवको साफ रखते हैं, हमारे लिअे कपड़ा बुनकर देते हैं, जूते बनाते हैं, और फिर भी हम अिनसे फिरण्ट रहते हैं। अिन लोगोंकी अितनी बड़ी सेवाके बदलेमें हम अिन्हें क्या देते हैं? अपनी जूठन! अपमान, गाली, गन्दगी, गरीबी!

हमारे पापका अन्त नहीं है। फिर क्यों न देश-परदेशमें हमारी दुर्दशा हो? क्यों न हम जहाँ-तहाँ ठुकराये जायँ? गांधीजी कहते हैं, कि हमारी गुलामी हमारे अिन पापोंका ही फल है। भगवान्ने ही यह फल हमें दिया है। अिसीलिअे वे हरिजनोंकी सेवा करते हैं, अपनेको हरिजन समझते हैं, और लोगोंको समझाते हैं, कि हरिजनोंको छूनेमें पाप नहीं, पुण्य है।

४२

हरिजन पहले

अेक गाँवमें सभा रखी गअी थी। गांधीजी अुसमें बोलनेवाले थे।

गांधीजीका भाषण सुननेकी अिच्छा किसे न होगी? गाँवकी अठारहों जातके लोग आ-आकर अिकट्ठा होने लगे — ब्राह्मण आये, बनिये आये, ठाकुर आये, पटेल, पटवारी, जमींदार, चौधरी, नाअी, तेली, कुम्हार, चमार, बढ़अी, सभी कोअी आये।

ढेढ़ोंके मुहल्लेसे ढेढ़ भी आये। अुन्होंने सोचा: सभामें चलना चाहिये। बापूजी पधारनेवाले हैं। अुनकी बातें सुननी चाहिये। अुनके दर्शन करने चाहिये। न जाना ठीक न होगा। वे भी आये।

सभावालोंने ढेढ़ोंको पहचान लिया। लोग चिल्ला अुठे: ‘अरे, ये तो ढेढ़ हैं! दूर, दूर! यहाँ नहीं; अुधर जाओ।’

दूसरोंने कहा: ‘जाओ, बैरंग वापस हो जाओ! तुम्हें किसने बुलाया था? यहाँ तुम्हारा क्या काम है?’

बेचारों पर चारों तरफसे फटकार पड़ने लगी! कोअी अुनकी मदद पर आता ही न था।

गरीबोंने नरमीसे कहा: ‘मालिक, हमें भी बैठने दो न! बापूजी तो हमारे भी हैं!’

किसीको दया न आअी। आखिर सभावालोंको समझाकर ढेढ़ोंके लिअे कुछ दूर पर थोड़ी जगह दे दी गअी और अुनसे कह दिया गया: ‘यहाँ बैठो, लेकिन खबरदार! किसीको छूना नहीं। किसीके पास जाना नहीं।’

‘नहीं मालिक! नहीं जायेंगे, यहीं बैठेंगे।’

सभामें खासी भीड़ हो गअी। पैर रखनेको जगह न मिलती थी। समय हुआ और गांधीजी आये। ‘वन्दे मातरम्’ और ‘महात्मा गांधीकी जय’ के नारोंसे सभास्थान गूंज अुठा। दूर बैठे हुअे अुन हरिजन भाअियोंने भी जय-जयकारकी पुकारमें भाग लिया, और वे अुझक-अुझककर अपने बापूको देखने लगे।

आते ही गांधीजी सीधे मंच पर पहुँचे और भाषण करनेको खड़े रहे। अुन्होंने अेक नजरमें सारी सभाका सिंहावलोकन कर लिया। बड़ी पैनी आँखें हैं अुनकी! दूर बैठे हुअे हरिजनोंकी अुस टोलीको अुन्होंने तुरन्त ताड़ लिया।

गाँववालोंको बुलाकर पूछा: ‘वे लोग अलग क्यों बैठे हैं?’

'महात्माजी, वे ढेढ़ हैं।'

'क्या हर्ज है, अगर वे सबके साथ बैठें?'

गाँववाले सोचमें पड़ गये; सिर खुजलाने लगे।

'आप लोग अुन्हें सभामें न बुला सकें, तो मैं अुनमें जाकर बैठूंगा और वहींसे भाषण करूँगा।'

बस, गांधीजी मंचसे नीचे अुतर आये, और अपने प्यारे हरिजनोंके पास जा पहुँचे। गाँवके कुछ साहसी लोग भी अुनके साथ हो लिये। हरिजन भाअियोंकी खुशीका ठिकाना न था। अुनके दिल बाँसों अुछल रहे थे। हृदय अुमड़े पड़ते थे। वे गद्गद कण्ठसे पुकार अुठे: 'बापूजीकी जय! जुग-जुग जीयें हमारे बापूजी!'

४३
आश्रममें हरिजन

गांधीजीने साबरमतीके किनारे अपना आश्रम खोला और अैलान किया कि कोअी भला हरिजन आश्रममें भरती होना चाहेगा, तो अुसे खुशी-खुशी भरती किया जायगा।

शहरके सेठोंने सोचा: 'गांधीजी तो यों ही कहते रहते हैं। मगर अैसे ठाले हरिजन हैं कहाँ, जो आकर आश्रममें भरती होंगे?' लोग अिसी खयालमें मस्त रहे और गांधीजीके आश्रमको पैसे-टकेसे अिमदाद पहुँचाते रहे। आश्रमके खर्चके बारेमें लोगोंने गांधीजीको बिलकुल बेफिकर बना दिया।

कुछ दिन अैसे ही बीत गये । अेक दिन अचानक अेक हरिजन परिवार आश्रममें आ धमका ! औरत, मर्द और दुधमुंही बच्ची ! तीन प्राणी थे । साथमें ठक्कर बापाकी सिफारिश थी ।

गांधीजीने सोचा : 'बस, परीक्षाका समय आ गया । भगवान् अब कसौटी पर चढ़ाना चाहता है । अिसीलिअे अुसने अिनको भेजा है ।'

आये हुअे हरिजनसे पूछा — 'आश्रमके नियम तो जानते हो न ?'

'जी हाँ ।'

'नियमोंका पालन कर सकोगे ?'

'जी हाँ, कोशिश करेंगे ।'

'बड़ी अच्छी बात है । आप लोग सुखसे यहाँ रहिये, और आश्रमको अपना घर समझिये ।'

अिस तरह अेक हरिजन परिवार आश्रमवासी बना । तीनों प्राणी सबके साथ रहते, सबमें मिलकर काम करते, और सबकी बराबरीसे बैठकर खाते ।

आश्रममें सब लोग अेकसी समझके नहीं थे । कअियोंको यह बुरा लगा । अुनके दिलमें खलबली मच गअी । लेकिन गांधीजीने सबको साफ-साफ कह दिया :

'मेरे लिअे तो हरिजन पहले हैं । जिनसे अिस धर्मका पालन न हो, वे खुशी-खुशी आश्रम छोड़ सकते हैं; फिर चाहे वह मेरी पत्नी हो चाहे पुत्र हो ।'

बात बिजलीकी तरह बस्ती भरमें फैल गअी कि गांधीजीके आश्रममें अेक ढेढ़ रहने लगा है ।

जो सेठ-साहूकार गांधीजीकी मदद करते थे, लेकिन कट्टर सनातनी थे, वे चौंक पड़े। अुन्होंने मदद वन्द कर दी। वे कहने लगे—'भला आदमी जो कहता था, वही करने भी लग गया। ये तो धरम डुवोनेके ढंग हैं। अैसे अधर्मीकी कौन मदद करे?'

मगनलाल गांधी आश्रमके व्यवस्थापक थे। अुन्हें फिकर हुअी। वे अेक दिन छोटा-सा मुँह लेकर गांधीजीके पास आये और बोले—'बापू, थैली तो अभीसे हलकी-हलकी है। अगले महीने क्या होगा?'

गांधीजीने ढारस दिलाते हुअे कहा—'भगवान् पर भरोसा रखो। जव कुछ नहीं रहेगा, तो हम ढेढ़ोंकी वस्तीमें जाकर वस जायेंगे, मजदूरी करेंगे और पेट पालेंगे, मगर सचाअीसे तिलभर भी न हटेंगे!'

४४

दो अैतिहासिक कूच

अपनी सत्याग्रहकी लड़ाअीमें गांधीजी कभी-कभी कूचका भी कार्यक्रम रखते हैं। सत्याग्रहकी अैसी अेक कूच अुन्होंने दक्षिण अफ्रीकामें की थी और दूसरी हिन्दुस्तानमें। हिन्दुस्तान-वाली कूच दांडीकूचके नामसे मशहूर है।

दक्षिण अफ्रीकाके सत्याग्रहमें जव सरकारने मनमानी पर कमर कस ली, तो गांधीजीने तीन पौण्डवाले 'जजिया' के खिलाफ लड़ाअी छेड़ दी, और हजारों गिरमिटिया मजदूरोंको

लड़ाओीमें शामिल होनेकी दावत दी । मजदूरोंने घड़ाघड़ खेतों और कारखानोंसे रुखसत ली और गांधीजीके झण्डे तले आ डटे ।

अब गांधीजी सोचने लगे कि सत्याग्रहका वह कौनसा तरीका होगा, जिससे मजबूर होकर सरकारको हजारों सत्याग्रहियोंकी मुश्कें बाँधनी पड़ें——हजारोंको जेल भेजनेका अिन्तजाम करना पड़े ।

आखिर गांधीजीको अेक अैसा तरीका सूझा, जिसका किसीको सपना भी न था। अुन्होंने अैलान कर दिया कि वे अपने भारी काफिलेके साथ पैदल कूच करेंगे, और बिना परवानेके ट्रान्सवालकी हदमें घुसकर परवानोंका कानून तोड़ेंगे।

बस कूचका दिन तय हो गया । कूच शुरू हो गअी । २,२११ आदमियोंका वह काफिला क्या था, अेक छोटी-मोटी निहत्थी फौज ही थी ! अुस काफिलेमें मर्दोंके साथ १२७ औरतें भी थीं । मजदूर अपने बाल-बच्चोंको साथ लिये कूच कर रहे थे । अपना-अपना सामान सब अपने कन्धों पर लादे चले जा रहे थे । काफिला अेक हद छोड़कर दूसरी हदमें जा पहुँचा । परवानेका कानून टूट गया । मगर सरकार मिनकी तक नहीं । रातमें जब सब लोग खा-पीकर सो रहे, तो पुलिस चुपकेसे आअी और गांधीजीको गिरफ्तार करके ले गअी ।

सवेरे साथियोंको पता चला । लोगोंके जोशका ठिकाना न रहा । अुन्होंने नये जोशसे कूच शुरू कर दी । दूसरे दिन गांधीजी जमानत पर छोड़ दिये गये । छूटते ही वे अपने दलमें आ मिले । लोगोंका अुत्साह चौगुना हो गया ।

अगले मुकाम पर सरकारने गांधीजीको फिर गिरफ्तार किया, फिर जमानत पर छोड़ा और गांधीजी फिर अपने साथियोंके बीच आ पहुँचे। लोगोंके हर्षका पार न रहा।

अिस काफिलेको बड़ी लम्बी-लम्बी मंजिलें तय करनी पड़ती थीं। दूरका रास्ता था। राहमें अेक बच्चा बीमार पड़ा और मर गया। सारी छावनीमें शोक (मातम) छा गया। लोगोंने बहादुरीके साथ अिस चोटको सहा और आगे बढ़ चले।

जैसे ही पड़ाव पड़ता, लोग सोने-बैठने, खाने-पीने, और झाड़ने-बुहारनेकी तैयारियोंमें जुट पड़ते; किसीको दम मारनेकी फुरसत न रहती। जहाँ पड़ाव होता, वहाँके हिन्दुस्तानी व्यापारी बड़े प्रेमसे काफिलेवालोंके लिअे खाने-पीनेका सामान पहुँचा देते।

तीसरी बार जब सरकारने गांधीजीको पकड़ा, तो फिर पकड़ा ही पकड़ा। जमानत पर भी न छोड़ा। मुकदमा चलाया और सजा ठोक दी। गांधीजी जेल चले गये।

अगले मुकाम पर सरकारने सब सत्याग्रहियोंको भी दल-बलके साथ गिरफ्तार कर लिया और दो स्पेशल गाड़ियोंमें चढ़ाकर रवाना कर दिया।

दाँडीकूच तो अभी कल ही की बात है। अुसे कौन नहीं जानता? जब गांधीजीने पूर्ण स्वराज्य या मुकम्मल आजादीके लिअे जंग छेड़नेका बीड़ा अुठाया, तो अुनके सामने सवाल पैदा हुआ कि सत्याग्रहियोंके लिअे जेलखानोंके दरवाजे क्यों कर खुलें। अुन्होंने छान-बीन शुरू की। कअी बातें सोची गअीं; कअी

सुझाअी गअीं; अन्तमें नमकका कानून तोड़नेकी बात तय पाअी। गांधीजीको वही जँच गअी।

नमकका कानून तोड़नेके लिअे गांधीजीने दाँडीकूचका कार्यक्रम बनाया और कूच शुरू करनेसे पहले यह भीषण प्रतिज्ञा की — 'जंगल-जंगल भटकूँगा; दर-दरकी खाक छानूँगा; कौअे-कुत्तेकी मौत मरूँगा; लेकिन मुकम्मल आज़ादीके बिना, सम्पूर्ण स्वराज्यके बिना, वापस आश्रममें पैर न रखूँगा।' बस, अिस प्रतिज्ञाके साथ वे चल पड़े।

कार्यक्रम यह बनाया कि साबरमती आश्रमसे पैदल चलेंगे। गुजरातके गाँवों और शहरोंमें ठहरते हुअे चलेंगे। अन्तमें समुद्रके किनारे दाँडी तक पहुँचकर वहाँ खुद नमक बनावेंगे, और नमकका कानून तोड़कर मुल्कमें लड़ाअीका अैलान करेंगे।

आश्रमके ८० साथियोंका अेक दल बनाकर गांधीजी १२ मार्च, १९३० को साबरमतीसे चल पड़े। सुबह-शाम चलते; दुपहरमें और रातमें मुकाम करते; मुकाम पर पहुँचकर लोग खाते-पीते, चरखा और तकली चलाते; और गांधीजी लोगोंको आज़ादीकी लड़ाअीका सन्देश या पैगाम सुनाते। जहाँ-जहाँ कूचवाले जाते, जहाँ वे ठहरते, जिन गाँवों और शहरोंके पाससे होकर निकलते, वहाँ लोगोंके दलके दल अुनके दर्शनको अुमड़े चले आते। अपने बापूको देखकर और बापूकी वाणी सुनकर वे गद्‌गद हो अुठते — अुनकी आँखोंमें खुशीके आँसू छलछला आते।

लोग रोज सोचते कि आज गिरफ्तार होंगे, कल गिरफ्तार होंगे; और रोज अुनकी अटकलें झूठी पड़तीं। आखिर गांधीजी

दाँडी पहुँचे; वहाँ समुद्रमें नहाये; समुद्रके पानीसे नमक वनाया और नमकका कानून तोड़ा। फिर भी सरकार चुप रही, ने गांधीजीकी गिरफ्तारीका हुक्म न छोड़ा।

सारे देशमें नमकका कानून टूटने लगा — लोग घर-घर क वनाने और कानून तोड़ने लगे।

सरकारी दमन शुरू हो गया; लोग गिरफ्तार होने लगे; जहाँ-तहाँ लाठियों और डण्डोंके जोरसे सभायें तोड़ी जाने लगीं; कअी जगह औरतों पर लाठियाँ चलीं, वच्चों पर डण्डे वरसे। अिन खवरोंसे गांधीजी वेचैन हो अुठे। वे सोचने लगे — 'ये डण्डे औरतों और वच्चों पर न वरसकर मुझ पर वरसने चाहिये। मैं क्या करूँ? कैसे ये मुझ पर वरसें?'

आखिर अुन्होंने धारासणा पर धावा करनेका, वहाँके सरकारी नमकको लूटनेका, निश्चय किया। लेकिन लूटके लिअे जिस दिन कूच करनेवाले थे, अुसके अेक दिन पहले ही रातमें पुलिस आअी और चुपकेसे गांधीजीको चुरा ले गअी। फिर अुनके साथियोंने धारासणा पर धावा वोला।

राष्ट्रीय अुपवास

पंजाबमें मातृभूमिका, मादरे हिन्दका, घोर अपमान हुआ था। अिस अपमानसे सबके दिलोंमें अेक आग जल अुठी थी, और सारे मुल्कने मिलकर सत्याग्रह करनेका निश्चय किया था।

लेकिन यह अितना बड़ा काम, भगीरथ काम, शुरू कैसे किया जाय? गाँव-गाँवमें और नगर-नगरमें सभायें करके? हाँ, यह अेक करने लायक काम है। लेकिन गांधीजीको सिर्फ सभाओंसे सन्तोष क्योंकर हो?

अच्छा तो गाँव-गाँव और शहर-शहरमें हड़ताल मनाअी जाय?

ठीक है, अिससे भी हमारा कदम कुछ आगे तो बढ़ता है; लेकिन गांधीजीकी तसल्लीके लिअे यह भी काफी न था। वे तो किसी ज्यादा बड़ी चीजके लिअे तड़प रहे थे। आखिर अेक बात सूझी। तय किया गया कि देशके सब लोग अेक ही दिन अिस सिरेसे अुस सिरे तक फाका करें, अुपवास रखें।

सन् १९२१ का साल था और अप्रैल महीनेकी १३ वीं तारीख। गांधीजीका सन्देश, अुनका पैगाम, देशभरमें फैल चुका था। अुस दिन देशके अिस कोनेसे अुस कोने तक लोगोंने व्रत रखा, फाका किया, शामको प्रार्थनामें शामिल हुअे, दुआयें कीं। वह अेक अैसा दिन था, जब अिस बड़े भारी मुल्कमें, अिस विशाल देशमें, तीस करोड़ औरत और मर्द नहीं थे, बल्कि तीस करोड़ सिरोंवाला और साठ करोड़ हाथ-पैरोंवाला अेक ही 'राष्ट्रपुरुष' था। अुस दिन देश अेक हो गया था। राष्ट्रीय अेकताका वह अेक अनोखा दृश्य था।

राष्ट्रीय अुपवासका वह दिन हिन्दुस्तानके अितिहासमें अमर हो चुका है।

४६

प्रेमके अुपवास

देशका बच्चा-बच्चा जानता है कि गांधीजी क्या चाहते हैं। वे चाहते हैं :

कोअी किसीको न मारे। कोअी किसीको न सताये।

यही अुनका अुपदेश है। यही वे चाहते हैं।

यही वजह है कि जो बालक अुनकी राष्ट्रीय शालाओंमें या कौमी मदरसोंमें पढ़ते हैं, वे नहीं जानते कि मार किस चिड़ियाका नाम है। वहाँ बच्चोंको मारपीटका जरा भी डर नहीं रहता। अगर कोअी शिक्षक मारने अुठता है, तो बालक खड़ा होकर पूछ सकता है — 'गांधीजी तो मारपीटको बुरा समझते हैं, फिर आप मारते क्यों हैं?'

बच्चोंसे गलती हो जाने पर भी गांधीजी अुन्हें मारते नहीं; न तानों-तिश्नोंसे अुन्हें शरमाते और बेअिज्जत ही करते हैं। लेकिन जब बच्चोंसे कोअी बड़ा गुनाह, बड़ी गलती हो जाती है, तो गांधीजी अुसकी सजा खुद भुगत लेते हैं — खुद भूखों रह जाते हैं। यह अुनका अपना तरीका है।

अेक दफा अुन्होंने अिसी तरह आठ दिनके और दूसरी दफा चौदह दिनके अुपवास किये थे। वे कहते हैं, बच्चोंके दोषके लिअे, अुनकी गलतियोंके लिअे, मैं अुन पर गुस्सा क्यों होअूं? खुद मेरे अन्दर अैसी कोअी बुराअी होनी चाहिये, जिससे बालकोंको भी बुरा काम करनेकी बात सूझी। अगर मैं पवित्र हूँ, तो मेरे पास रहनेवाले बालक अपवित्र कैसे हो सकते हैं? मैं पाक और ये नापाक क्यों? अगर मैं सच्चे

मानोंमें अहिंसक हूँ, अहिंसाका ठीक-ठीक पालन करता हूँ, तो यह हो नहीं सकता कि कोअी बालक मुझसे डरे---अपनी गलतियाँ मुझसे छिपावे ।

बस, अिन्हीं विचारोंके कारण गांधीजी अैसे मौकों पर खुद अुपवास कर लेते हैं। बच्चोंको सजा नहीं देते ।

अब कौन अैसा बालक होगा, जो अिस अपार प्रेमके आगे अपना सिर न झुकायेगा ?

४७

महान् अुपवास

गांधीजीने हिन्दुओं और मुसलमानोंको बहुतेरा समझाया, लेकिन वे लड़नेसे बाज न आये ।

गांधीजीने कहा : 'भाअियो, हम अेक ही देशकी सन्तान हैं । हमें लड़ना न चाहिये ।'

लेकिन लड़ाअी मिटी नहीं ।

गांधीजीने फिर कहा : 'सोचो तो, हमारे बाप-दादे किस तरह मिल-जुलकर रहते थे ।'

तो भी झगड़े तो होते ही रहे ।

गांधीजीने समझाया : 'लड़नेमें किसीकी खानदानी नजर नहीं आती । आप लोग हिलमिलकर रहिये और लड़ना-झगड़ना बन्द कर दीजिये ।'

पर किसीने अुनकी बात पर कान न दिया। लड़ाअीके जोशमें खानदानियतकी परवाह कौन करे?

गांधीजीने चेतावनी देते हुअे कहा: 'याद रखिये, जब तक आप अेक न होंगे, आपको स्वराज्य भी नहीं मिलेगा।'

लेकिन जहाँ दिमागमें गुस्सा भरा हो, वहाँ स्वराज्यकी बातें कौन सुनता?

गांधीजीने फिर चेताया और कहा: 'देखो, दोकी लड़ाअीमें तीसरेका फायदा हो रहा है। जरा आँखें खोलकर देखो।'

पर आँखें तो मारे गुस्सेके अन्धी हो रही थीं। वे क्योंकर खुलतीं?

आखिर जब गांधीजी कहते-कहते थक गये और किसीने अुनकी न सुनी, तो जानते हो अुन्होंने क्या किया?

बस अेक दिन २१ दिनके अुपवासका कठिन व्रत लेकर बैठ गये।

अुन दिनों गांधीजी दिल्लीमें थे और महान् मुसलमान डॉक्टर अनसारीके घर रहते थे। वहीं अुन्होंने अपने २१ दिनके अुपवास शुरू किये। गांधीजी हँसते-हँसते भूखकी पीड़ायें सहते, और अनसारीजी गद्‌गद भावसे अुपवासी गांधीजीकी सेवा करते।

स्वराज्य

हिन्दुस्तानके दादा मरहूम (स्वर्गीय) दादाभाअी नौरोजीने देशके सामने स्वराज्यका मंत्र रखा।

स्वर्गीय लोकमान्य तिलकने अुसे गाँव-गाँव और घर-घर पहुँचाया।

गांधीजीने गाँव-गाँवमें और घर-घरमें स्वराज्यके लिअे यज्ञ शुरू कराया — कुर्बानीका सिलसिला चलाया।

हिन्दुस्तानके दादाने किताबोंको मथ-मथकर यह पता लगाया कि अिस मुल्ककी बड़ीसे बड़ी बीमारी भूख है।

तिलक महाराजने छः साल तक जेलके अन्दर बन्द रहकर देशवालोंको यह सिखाया कि स्वराज्य ही अिस भूखको मिटा सकता है।

अब गांधीजी अपनी तपस्यासे देशको अेक नया पाठ, नया सबक सिखा रहे हैं। वे कहते हैं:

'देशकी बीमारी स्वराज्यसे ही मिटेगी, और स्वराज्य खादीसे ही मिलेगा।'

यह न समझो कि स्वराज्यकी लड़ाअी बड़े-बड़े लड़वैये ही लड़ सकते हैं। नहीं, छोटे-छोटे बच्चे भी अुसमें सिपाहीका काम कर सकते हैं। अगर तुम स्वराज्यकी सेनाके सिपाही बनना चाहते हो, तो नीचे लिखे काम करनेका निश्चय कर लो और स्वराज्यके सैनिक बन जाओ।

१. विदेशी कपड़ा पहनना छोड़ दो, और शुद्ध खादी पहनने लगो।

२. देशकी आजादीके लिअे रोज सूत कातो।

३. गुलामीको बढ़ानेवाली तालीमसे परहेज करो। अैसी तालीम लो, अैसे मदरसोंमें पढ़ो, जहाँ पढ़नेसे दिलमें देश-भक्तिके भाव पैदा हों ।

४. अपनी मातृभाषा (मादरी जबान) और राष्ट्रभाषा (कौमी जबान) को अच्छी तरह सीखो । अंग्रेजीको पराअी माँ समझो, और अुसके दूधकी ज्यादा अुम्मीद न रखो ।

५. यह समझ लो कि हमारा हिन्दुस्तान गाँवोंका देश है, जिसमें लाखों गाँव हैं; और गाँवोंमें गरीबीका पार नहीं है। अिन गाँवोंसे प्रेम करना सीखो । गाँवोंमें जाकर बसनेके सपने देखो। गाँवकी बनी हुअी चीजोंका अुपयोग अभिमानके साथ करो ।

६. हरिजनोंके बच्चोंको अपने पास प्रेमसे बैठने और पढ़ने दो । अगर हम चाहते हैं कि हमें स्वराज्य मिले, तो हमारा फर्ज है कि हम सबसे पहले हरिजनोंको पूरा-पूरा स्वराज्य दे दें ।

४९

अंग्रेजोंसे

गांधीजीने 'हिन्द स्वराज्य' नामकी अेक किताब लिखी है । अुसमें अुन्होंने स्वराज्यके बारेमें अपने विचार बहुत विस्तारसे समझाये हैं । किताब सम्पादक और पाठकके बीच हुअी अेक बातचीतके ढंग पर लिखी गअी है ।

पाठक पूछता है: 'अंग्रेजोंसे आप क्या कहेंगे?'

हम भी यही सवाल पूछना चाहते हैं ।

सम्पादककी हैसियतसे गांधीजीने अिस सवालका नीचे लिखा जवाब दिया है। अिस जवाबसे हमें गांधीजीके विचारोंको समझनेका मौका मिलता है।

सम्पादक कहता है:

मैं अुनसे (अंग्रेजोंसे) निहायत नरमीके साथ कहूँगा कि आप हमारे राजा जरूर हैं। अपनी तलवारके जोरसे हैं या हमारी मरजीसे, अिस सवालकी बहसमें पड़नेकी मुझे कोअी जरूरत नहीं है। आप मेरे देशमें रहना चाहें, रहें; मुझे आपसे कोअी दुश्मनी नहीं। लेकिन राजा होते हुअे भी रिआयाके सामने तो आपको नौकरकी तरह ही रहना होगा। आपका हुक्म हमें नहीं, बल्कि हमारा हुक्म आपको मानना होगा।

अब तक आप यहाँसे जो धन ले गये, सो तो आप हजम कर गये; लेकिन अब आगे अैसा न हो सकेगा।

आप हिन्दुस्तानकी रखवालीके लिअे यहाँ रहना चाहें, तो रह सकते हैं। लेकिन हमारे साथ व्यापार करके हमें लूटनेका लालच तो आपको छोड़ ही देना होगा।

आप जिस सभ्यताके हामी हैं, हम अुसे सभ्यता ही नहीं समझते। अपनी सभ्यताको हम आपकी सभ्यतासे कहीं अच्छी समझते हैं। आप भी अिसको समझ लें तो आपका फायदा ही है। लेकिन अगर आपको यह न सूझे, तो भी आप ही की अेक कहावतके मुताबिक आपको हमारे देशमें देशी बनकर रहना चाहिये।

आपको अैसा कोअी काम न करना चाहिये, जो हमारे धर्ममें रुकावट डाले। हाकिमकी हैसियतसे आपका फर्ज है

कि आप हिन्दुओंके खातिर गायका और मुसलमानोंके खातिर सुअरका मांस खाना छोड़ दें। अब तक हम दबे हुअे थे, अिससे कुछ कह नहीं पाये; लेकिन आप यह न समझिये कि हमारे दिल दुखे नहीं हैं। हम अपनी खुदगर्जी और अपने दब्बूपनसे अब तक कुछ कह नहीं सके, लेकिन अब तो कहना हमारा फर्ज हो गया है।

हम मानते हैं कि आपके खोले हुअे मदरसे और आपकी अदालतें हमारे किसी कामकी नहीं। अुनके बदले हमें अपनी असली अदालतें और असली मदरसे खोलने होंगे।

हिन्दुस्तानकी भाषा अंग्रेजी नहीं, हिन्दुस्तानी है। वह आपको सीखनी होगी और हम तो अपना सारा व्यवहार आपसे अपनी ही भाषामें रख सकेंगे।

आप जिस तरह रेलों और फौजों पर पानीकी तरह पैसा बहाते हैं, अुसे हम सह नहीं सकते। हमें अुनकी कोअी जरूरत नहीं मालूम होती। आपको रूसका डर होगा। हमें नहीं है। जब वे आयेंगे, हम देख लेंगे। अगर अुस वक्त आप भी रहे, तो दोनों मिलकर देख लेंगे।

हमें विलायत या यूरोपके कपड़ेकी जरूरत नहीं है। हम तो अपने देशमें बनी चीजोंसे अपना काम चला लेंगे। यह हो नहीं सकता कि आप अेक आँख मैंचेस्टर पर रखें और दूसरी हम पर।

जब आप समझ लेंगे कि हमारा और आपका अेक ही स्वार्थ है, और अुसी तरह बरतेंगे, तभी हम आपको साथ दे सकेंगे।

मैं आपके साथ गुस्ताखीसे पेश नहीं आ रहा हूँ। मेरा मतलब साफ है। आपके पास हथियारोंकी ताकत है। जबर्दस्त

जहाजी बेड़ा है। अिनका मुकाबला हम अिन्हीं चीजोंसे नहीं कर सकते। फिर भी अूपर जो कुछ कहा है, वह आपको मंजूर न हो, तो हम आपके साथ रह नहीं सकते। आप चाहें, और आपसे हो सके, तो आप हमें कत्ल कर डालिये। जी चाहे तोपसे अुड़ा दीजिये। लेकिन जो चीज हमें पसन्द नहीं है, अुसमें हम आपकी हरगिज मदद न करेंगे; और बिना हमारी मददके आप अेक कदम भी बढ़ न सकेंगे।

मुमकिन है कि हुकूमतकी मस्तीमें, सत्ताके घमण्डमें, आप हमारी अिस बातको हँसीमें अुड़ा दें। और हो सकता है कि हम फौरन ही आपको यह न दिखा सकें कि अिस तरह हँसना बेकार है। लेकिन अगर हममें ताकत होगी, तो आप देखेंगे कि आपकी यह मस्ती निकम्मी थी, और हँसी अुलटी अक्लकी निशानी थी।

हम मानते हैं कि दिलसे आप भी अेक अैसी कौमके लोग हैं, जो धर्मको मानती है। हम तो धर्मभूमिके ही निवासी हैं। आपका हमारा साथ कैसे हुआ, अिसकी बहसमें पड़ना फिजूल है। लेकिन अपने अिस सम्बन्धका अुपयोग हम अच्छे काममें कर सकते हैं। जो अंग्रेज हिन्दुस्तानमें आते हैं, वे अंग्रेजी प्रजाके सच्चे नुमाअिन्दे या प्रतिनिधि नहीं होते। अिसी तरह हम लोग भी, जो आधे अंग्रेज बन गये हैं, अपनेको हिन्दुस्तानकी असली प्रजाके सच्चे प्रतिनिधि नहीं कह सकते। अगर विलायतके अंग्रेजोंको हिन्दुस्तानकी हुकूमतका कच्चा चिट्ठा मालूम हो जाय, तो वे जरूर आपका विरोध करेंगे। हिन्दुस्तानके लोगोंने तो आपके साथ नाममात्रका ही सम्बन्ध रखा है।

अगर आप अपनी सभ्यताको, जो दरअसल सभ्यता नहीं है, छोड़ देंगे और अपने धर्मका विचार करेंगे, तो आप खुद महसूस करेंगे कि हमारी माँग वाजिब और मुनासिब है। अिसी तरह आप हिन्दुस्तानमें रह सकते हैं।

अगर आप अिस तरह रहेंगे, तो हमें आपसे जो कुछ सीखना है हम सीखेंगे; और हमसे आपको जो बहुत-कुछ सीखना है, आप सीखियेगा। अिस तरीकेसे हम दोनों फायदेमें रहेंगे और दुनियाको भी फायदा पहुँचायेंगे। लेकिन यह होगा तभी, जब हमारा और आपका सम्बन्ध धर्मकी नींव पर कायम किया जायगा — अुसकी तहमें धर्म होगा।

५०

प्रेम

क्या बात है कि हम सब गांधीजीसे अितना ज्यादा प्रेम करते हैं?

बात यह है कि अुनके दिलमें हमारे लिअे प्रेम ही प्रेम भरा हुआ है।

क्या वजह है कि गांधीजीसे किसीको कोअी दुश्मनी नहीं?

वजह यह है कि अुनके दिलमें किसीके लिअे कभी दुश्मनीके खयाल ही नहीं आते।

गांधीजी अंग्रेज सरकारके अत्याचारोंका कड़ेसे कड़ा विरोध करते हैं, फिर भी बहुतेरे अंग्रेज हैं, जो गांधीजीसे मुहब्बत रखते हैं। अिसलिअे कि गांधीजीके मनमें अंग्रेजोंके लिअे भी प्रेम ही प्रेम भरा हुआ है।

तुमसे कोअी काम बिगड़ जाय, कोअी गलती हो जाय, और मैं तुम पर गुस्सा होअूं, तो अिसमें मेरी बड़ाअी क्या? अैसा तो जानवर भी करते हैं। आदमी वह है, जो गुनहगारोंको भी अपने प्यारसे नहलाता रहे; प्रेमके साथ अुनकी शरारतोंको सहता रहे।

गांधीजी अैसा ही करते हैं। वे किसीसे दुश्मनी नहीं रखते; अिसीलिअे अुन्हें भी कोअी अपना दुश्मन नहीं समझता। वे सबको अपने प्रेमसे नहलाते रहते हैं, अिसीसे हमारे दिलोंमें भी अुनके लिअे प्रेम ही प्रेम भरा रहता है।

५१
गांधीजीकी अहिंसा

'अहिंसासे तुम क्या समझे?'

'किसीकी हिंसा न करना। किसीको न मारना; न सताना।'

'वैसे, किसीके लिअे मनमें गुस्सा रखना भी हिंसा ही है। अिसलिअे मनमें अिस तरहकी हिंसाको भी जगह न देना, और मनके कोने-कोनेको प्रेमसे भरे रहना अहिंसा है।'

'लेकिन जब कोअी हम पर हमला करे, तो हम अहिंसाका पालन कैसे करें?'

'सच पूछो तो अैसे वक्त ही अहिंसाकी सच्ची परीक्षा होती है। जब कोअी सताता नहीं, गुस्सा होता नहीं, तब तो कुत्ते-बिल्ली भी अहिंसक रह लेते हैं। लेकिन वह अहिंसा किस कामकी?'

'अगर अिस तरह हर किसीकी मार खाकर बैठ जायँ तो दुनिया हमें डरपोक न कहेगी?'

'डरपोक क्यों कहेगी? हम मार खाकर न तो रोते हैं, और न मारके डरसे भागते ही हैं। प्रेमके कारण हमें गुस्सा नहीं आता, हम किसी पर हाथ नहीं अुठाते, तो डरपोक कैसे बन जाते हैं?'

'भाअी, यह तो बड़ी टेढ़ी खीर है। मारनेवालेको न मारना, सतानेवालेसे प्यार करना, बहुत ही मुश्किल है। अिससे अच्छा और आसान तो यह है कि जो हमें मारें, अुसे हम भी मार दें।'

'सच कहते हो। अहिंसक बनना आसान नहीं है। अहिंसाका मार्ग शूरोंका है। अहिंसा शेरदिलोंकी है, कायरों और डरपोकोंकी नहीं।'

गांधीजी अैसी ही अहिंसाका पालन करते हैं, और हमसे भी कहते हैं कि हम सच्चे अहिंसक बनें।

५२

आत्मबल

आज दुनियामें मार-धाड़ करनेवालोंका बड़ा जोर है। वे कहते हैं: 'अिसने हमें सलाम नहीं किया, हम अिसे मार डालेंगे।'

गांधीजी हाथ अुठाकर और पुकार-पुकारकर कहते हैं:

'अय भारतवासियो, तुम न तो अिस कोलाहलमें शामिल होओ, न अिससे डरकर भागो। तुम अपनी अहिंसा पर डटे रहो। जब सारी दुनिया लड़-झगड़कर थक जायगी, तो हमींसे अहिंसा सीखने आयेगी।

'कोअी अपने मनमें यह डर न रखो कि अगर हम अहिंसाका पालन करेंगे, तो सब मिलकर हमें मार डालेंगे। तुम अहिंसाको पहचानते नहीं, अिसी कारण अुससे डरा करते हो। अहिंसा वह चीज है, जिससे दुश्मन भी दोस्त बन जाते हैं।'

दुनियाके लोगोंको गांधीजीके अिस अुपदेश पर विश्वास नहीं बैठता। अुन्हें अिसकी सचाअीका अितमीनान नहीं होता।

अगर किसी देशके पास अेक लाख फौज है, तो दूसरा पाँच लाख रखता है, और तीसरा दस लाख।

अेक देशके पास सौ लड़ाकू जहाज हैं, तो दूसरेके पास दस सौ, और तीसरेके पास दस हजार।

अगर अेक देश सौ हवाअी जहाज रखता है, तो दूसरा पाँच सौ, और तीसरा पाँच हजार।

जिसके पास जितने कम हवाअी जहाज हैं, अुसे अुतनी ही कम नींद आती है, और अुस पर रात-दिन अपने जहाजोंकी संख्या बढ़ानेकी फिक्र सवार रहती है।

फिर ये विमान, ये यान, मुफ्तमें नहीं बनते।

अिनके पीछे करोड़ों-अरबों रुपयोंका धुआँ अुड़ जाता है।

ये करोड़ों आते कहाँसे हैं?

आते हैं प्रजाके पसीने और प्रजाके खूनसे।

गांधीजीने अहिंसाके जो हथियार हमें दिये हैं, वे ये हैं:

सत्याग्रह।

असहयोग।

बलिदान।

हँसते-हँसते मुसीबतोंका सामना करनेवाली जनताको देखकर अत्याचारीका अत्याचार निस्तेज हो जाता है। जल्लादके हाथ काँप अुठते हैं। शिकारको कराहते देखकर ही न शिकारीका दिल नाचता है?

तो बताअिये कौन ताकत बड़ी है? तोपकी या अहिंसाकी? कौन बल बड़ा है? तोप-तलवारका या आत्माका?

गांधीजी सुनी या पढ़ी हुअी बात नहीं कहते। तरह-तरहके संकट सहन करके अुन्होंने अहिंसारूपी रत्न पाया है।

अहिंसामें ही भारतवर्षका अुद्धार और जय जयकार है।

हमारे कुछ और हिन्दी प्रकाशन

महादेवभाअीका पूर्वचरित	०-१४-०
हिमालयकी यात्रा	२-०-०
स्मरण-यात्रा	३-८-०
जीवनका काव्य	२-०-०
बापूकी झांकियां	१-०-०
अुत्तरकी दीवारें	०-१४-०
अुस पारके पड़ोसी	३-८-०
स्त्री-पुरुष-मर्यादा	१-१२-०
जड़मूलसे क्रान्ति	१-८-०
गांधी और साम्यवाद	१-४-०
भावी भारतकी अेक तसवीर	१-०-०
जीवनशोधन	३-०-०
बापू — मैंने क्या देखा, क्या समझा?	३-०-०
सर्वोदयका सिद्धान्त	०-१०-०
जीवनका सद्व्यय	१-०-०
हमारी बा	२-०-०
बा और बापूकी शीतल छायामें	२-८-०
बापू – मेरी मां	०-१०-०
मरुकुंज	१-४-०
गांधीजीकी संक्षिप्त आत्मकथा	१-८-०
गांधीजी	०-१२-०
कलकत्तेका चमत्कार	१-४-०
ग्रामसेवकके दस कार्यक्रम	१-४-०

डाकखर्च अलग

नवजीवन कार्यालय, अहमदाबाद–१४